सत्साहित्य प्रकाशन

आज का

इंगलिस्तान

पत्रकार का आंखों देखा

मुकुटबिहारी वर्मा

भूमिका-लेखक
काकासाहब कालेलकर
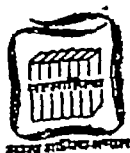
१९६१

सस्ता साहित्य मंडल - नई दिल्ली

प्रकाशक	मार्तण्ड उपाध्याय मंत्री, सस्ता साहित्य मडल, नई दिल्ली
संस्करण	पहला १९६१
मूल्य	दो रुपये
मुद्रक	हीरा आर्ट प्रेस, दिल्ली

प्रकाशकीय

हमे बड़ी प्रसन्नता है कि हमारे यात्रा-साहित्य मे इस पुस्तक के द्वारा एक नई कड़ी जुड रही है। पुस्तक के लेखक कुछ समय पहले इग्लैड गये थे और वहा उन्होने जो कुछ देखा, उसका बडा ही यथार्थ वर्णन इसमे किया है। कहने की आवश्यकता नही कि इसके विवरण लेखक की अनुभूतियो पर आधारित होने के कारण एक ओर रोचक है, तो दूसरी ओर वहा की वर्तमान अवस्था का चित्र उपस्थित करने के कारण ज्ञानवर्धक भी है। यात्रा-विवरण के साथ-साथ अग्रेंजी सस्कृति, राजनीति, उद्योग तथा जन-जीवन की झाकिया भी इसमे मिलती है।

पुस्तक मे अनेक चित्र भी दे दिये गये है, जिनसे यह और अधिक रोचक और प्रामाणिक हो गई है।

हमारे यात्रा-साहित्य मे अबतक नौ पुस्तके निकल चुकी हैं, जिनमे चार विश्व के विभिन्न देशो के प्रवास से सबंधित हैं। इन पुस्तको की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वे उन व्यक्तियो द्वारा लिखी गई हैं, जिन्होने स्वय यात्रा की थी। फलतः सभी पुस्तके बडी ही सजीव एव प्रामाणिक है।

हम आशा करते है कि अन्य पुस्तकों की भाति इस पुस्तक को भी पाठक रुचिपूर्वक पढेगे और इससे लाभान्वित होगे।

—मंत्री

भूमिका

श्री मुकुटविहारीजी का यह प्रवास-वर्णन मैंने चाव से पढा। इनके लेखन-काल के प्रारभ मे इन्होने मेरे चंद लेखो का अनुवाद किया था। तव से इनके प्रति सद्भाव तो था ही। जव कभी 'हिंदुस्तान' के लिए मुझसे कोई लेख मागते थे, तुरत लिख देता था। अव इनका यह विदेश-यात्रा वर्णन पढकर यह देख सका हू कि इनकी वर्णन-शैली प्रौढ और मुरव्वे के जैसी स्वादिष्ट हो गई है। असर करने का 'प्रयत्न' कही भी दीख नही पडता।

इस यात्रा-वर्णन का प्रधान गुण यह है कि मुकुटविहारी-जी ने विदेश की परिस्थिति को भारतीय दृष्टि से देखा है और स्वदेश की परिस्थिति से तुलना करके अपने लोगो के लिए जो जानकारी और वोध हितकर है, वही दिया है। ऐसा लेखन ही स्वाभाविकतया पाठक को तृप्ति दे सकता हैं।

छ सप्ताह की इस यात्रा में प्रधान वर्णन तो इग्लैंड के जन-जीवन का ही है। आकाशयान की यात्रा का रोमाच अव पहले के जैसा नहीं रहा है। इसीलिए शायद इन्होने उसका संक्षेप किया है। इग्लिश लोगों की उद्योगिता, उनकी वैज्ञानिक खोज, यन्त्र-विद्या का नैपुण्य, विशाल कल-कारखाने और औद्योगिक तन्त्र चलाने का उनका सामर्थ्य—सवकी हमे यहा

अच्छी जानकारी मिलती है। साथ-साथ इसी शक्ति के द्वारा मनुष्य-जीवन व्यवस्थित, नियन्त्रित और सुखी करने के प्रयत्न का भी बयान हमे मिलता है। बच्चों की शिक्षा और सुखाभारी, वृद्धो की हिफाजत के सस्थागत प्रयत्न और उनकी मर्यादाओं को बड़ी ही खूबी से बताया है।

मुझे सबसे आकर्षण इस बात का हुआ कि मतव्य स्पष्ट शब्दो मे कहते हुए भी कही भी कटुता नही पाई जाती है। हम सब मानव है, एक ही मिट्टी से बने हुए हैं, गुण-दोप सर्वत्र एक-से है, हमने अपने सवालो का हल एक ढग से ढूढा है, तो पश्चिम के समाज ने दूसरे ढग से ढूढा है, इस बुनियादी भेद को हम जरूर समझ ले, लेकिन जो गहरी एकता मानव-जीवन मे पाई जाती है, उसे भूले नही—यही है मुकुट-बिहारीजी की जीवन-दृष्टि। स्वयं पत्रकार या वृत्तविवेचक होने से विलायत के इस धधे के विकास की ओर इनका ध्यान अधिक गया है और इसका वर्णन उन्होने रोचक ढंग से दिया है।

स्त्री-पुरुष सबध, वैवाहिक जीवन, सामाजिक रस्म-रिवाज आदि के बारे मे भी इनका दृष्टिकोण सुलझा हुआ है।

जब कभी मैंने विदेश-यात्रा की है, मैने जमीन और जनता, इन दो तत्वो में से किसीको भी गौण नही बनाया है। इस-लिए इस प्रवास-वर्णन में और समाज-निरीक्षण के बयान में प्राकृतिक दृश्यो के वर्णन की कमी की ओर मेरा ध्यान गया। लेकिन आश्चर्य नही हुआ। अखबारनवीस मानवी जीवन के राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और सास्कृतिक पहलू मे इतने व्यस्त रहते है कि पहाड़-पर्वत, नदी-नाले, आकाश के

सितारे और जमीन पर के फूल, बादलों की लीला और ऋतु-परिवर्तन की शोभा उनके ध्यान मे ही नही आती है। इग्लेड, फ्रास, जर्मनी, स्विट्जरलैड आदि देशों मे मनुष्य के पुरुषार्थ का वर्णन भी यहा सहानुभूतिपूर्ण शब्दो मे और हमारे लोगो के लिए रोचक रूप मे दिया है, यही प्रसन्नता का विषय है। कही भी अति विस्तार न करने का लेखक का सयम भी सराहनीय है।

हिंदी पाठको को सतोष होगा कि इस किताब में उनकी ही जिज्ञासा को प्रधान स्थान दिया है।

—काका कालेलकर

अपनी बात

ब्रिटिश हाईकमिश्नर के निमत्रण पर तीन अन्य पत्रकारो के साथ मै ब्रिटेन गया। मेरे अलावा अन्य पत्रकार थे— 'टाइम्स ऑाव इडिया' के श्री ननपोरिया, 'हिंदू' के श्री नृसिंहन और 'प्रजावाणी' के श्री रामचद्र राव। हमारी यात्रा का उद्देश्य ब्रिटिश जन-जीवन का अध्ययन कर वहा की सस्कृति तथा प्रगति का ज्ञान प्राप्त करना था, जिससे दोनो देशो के बीच निकटता आये और सद्भावना मे वृद्धि हो। ब्रिटिश राष्ट्र-मडल संपर्क विभाग ने हमारा कार्यक्रम बनाया और इस बात का प्रयास किया कि एक महीने के अल्प काल मे हम ब्रिटेन को अधिक-से-अधिक जितना देख सके, देख ले।

जहातक यात्रा का सवध है, सामान्यतः हमे कोई कष्ट नही हुआ। जीवन के नये अनुभव अवश्य हुए। अग्रेजो को उनके अपने देश मे निकट से देखने-समझने का जो अवसर मिला, उससे वह धारणा भी वदली, जो भारत मे उनके रूप और रुख को देखकर उनके प्रति वनी हुई थी। ब्रिटेन से लौटते हुए जर्मनी और स्विट्जरलैंड की एक झाकी भी ली। सभी जगह लोगो से मिलने-जुलने और व्यवहार का जो अनुभव हुआ, उसने इस धारणा को वद्धमूल किया कि मानव-स्वभाव सर्वत्र एकसमान है। प्रेम-घृणा, राग-द्वेष, सुख से

रहने, अच्छा खाने-पहनने, दूसरो के सामने अच्छा दीखने आदि की मानवोचित भावनाए सर्वत्र विद्यमान हैं। यह भी अनुभव हुआ कि आम लोग अपनी ही समस्याओ में इतने उलझे रहते हैं कि उन्हे दूसरे देशवालो के प्रति बुरी भावना रखने का खयाल नही होता। युद्ध से वे डरते हैं और शातिपूर्वक अपनी गुजर-बसर करना चाहते हैं। और तो और, पाकिस्तानी स्त्री-पुरुषो मे भी, जो इस यात्रा मे यहा-वहा हमे मिले, भारत या भारतीयो के प्रति परायेपन की भावना के बजाय प्रेम और अपनापन ही उछलता हुआ नजर आया।

ब्रिटेन मे हम पूरे पाच सप्ताह रहे। इस बीच ब्रिटिश राष्ट्रमडल सपर्क विभाग, उपनिवेश विभाग और बोर्ड ऑव ट्रेड के सर्वोच्च और प्रमुख अधिकारियो से मिले। ब्रिटिश उद्योगो का अवलोकन किया। प्रमुख व्यापारिक सस्थानो के व्यक्तियो से मिले। व्यवसाय-मडल तथा ट्रेड यूनियन नेताओ से भी विचार-विनिमय हुआ। भारत की औद्योगिक उन्नति, खासकर पचवर्षीय विकास-योजनाओ मे उनकी दिलचस्पी का हमे भान हुआ। ब्रिटिश राष्ट्रमडल सपर्क मत्री लार्ड होम ने बातचीत मे यह भी स्पष्ट किया कि चार वर्ष पहले भारत के भविष्य के बारे मे जो शका थी, वह अब नही है। लेकिन जब हमारी ओर से यह बात उठाई गई कि भारत मे नई ब्रिटिश पूजी उतनी नही लग रही है, बल्कि होता प्राय. यह है कि पहले से लगी पूजी का जो मुनाफा होता है, उसीका कुछ भाग ब्रिटिश पूजी के नाम पर यहा लगाया जा रहा है, तो शुद्ध व्यापारिक दृष्टिकोण सामने आया। कुछ तो ब्रिटिश कठिनाइया प्रस्तुत की गई, पर साथ ही किसी-न-किसी रूप मे यह बात

भी सामने आई कि भारत मे ब्रिटिश पूजी लगाये जाने के मार्ग मे तीन बड़ी रुकावटे हैं—१. कर, २. राष्ट्रीयकरण और ३. भारतीयकरण।

जो लोग पूजी लगा सकते हैं, उनमे यह भावना हमे प्रायः मिली कि भारत मे उद्योग-धंधो पर कर-भार वहुत है। दूसरे समाजवाद के साथ बीच-बीच मे राष्ट्रीयकरण की जो आवाज उठती रहती है, उससे यह आशंका है कि पूजी लगाकर कोई उद्योग शुरू करे और सरकार उसका राष्ट्रीयकरण कर ले, तो क्या लाभ ? तीसरे भारतीयकरण का भी भय वास्तविक है। सामान्य विचारधारा यह है कि पूजी हम लगायें और उस पर नियत्रण व प्रबंध मे दूसरो को भागीदार बनाना पड़े, तो कुशलतापूर्वक उस उद्योग को नही जमाया जा सकता, क्योकि मुनाफे की स्थिति जब आये, तबतक हमारे बजाय दूसरों के उस पर हावी हो जाने का अदेशा है। सरकारी के बजाय निजी उद्योग की, और व्यापार मे सरकारी हस्तक्षेप से मुक्तता की भावना वहा प्रबल मालूम हुई। एक प्रमुख जहाजी व्यापारी की यह शिकायत भी कम जोरदार नही थी कि गोआ से भारत के सबंध कैसे भी हों, गोआ के सीधे रास्ते को छोडकर हमे जहाजों से माल ले जाने मे भारी असुविधा तथा अतिरिक्त खर्च का सामना करना पडता है। ब्रिटिश पूजी और दक्षता को अपने यहा आकर्षित करना है, तो इन बातो पर विचार करना होगा।

ब्रिटिश उद्योग-धधो के अलावा हमने वहां के साहित्यिक, सास्कृतिक एव सामान्य जन-जीवन को देखने-समझने का भी प्रयत्न किया। ब्रिटिश पत्रकारो से मिलना स्वाभाविक था।

उनसे तथा अन्य विशिष्ट व्यक्तियो से भारत की समस्याओं पर और भारत-ब्रिटेन के सबधो पर चर्चा हुई। शिक्षण संस्थाओ को हमने देखा। आपेरा, थिएटर के अलावा आद्य कोषकार डाक्टर जानसन के घर और विश्व-विख्यात साहित्यकार शेक्सपियर की जन्मभूमि की साहित्यिक तीर्थ-यात्रा भी की। साथ ही बूढो के निवासगृह, अवकाश-प्राप्त व्यक्तियो के घर, बच्चो के क्लब और किसान-परिवार का अवलोकन किया। सयोगवश आम चुनाव के समय हम वही थे। अतः चुनाव की चहल-पहल भी देखी। पार्टी-कार्यालयो मे हम पहले ही जा चुके थे, चुनाव के लिए पार्लमेंट-विसर्जन हमने देखा, कजरवेटिव और मजदूर उम्मीदवारों की सभाओ मे हम गये, मतदान-स्थानो का चक्कर लगाया और टेलीविजन पर चुनाव-परिणामो की घोषणा तथा उनका विश्लेषण भी हम देर रात तक देखते-सुनते रहे। ब्रिटेन-स्थित भारतीयो से मिले, उनके घर गये और उनके अनुभव सुने, साथ ही कुछ अग्रेज मित्रो के घर भी उनका प्रेमपूर्ण आतिथ्य ग्रहण किया।

एक उन्नत देश के पूरे अध्ययन के लिए छ सप्ताह का समय शायद काफी न माना जाये। किंतु वहा मिले सहयोग से, और वहा के रहनेवालो के सौजन्य से हम कह सकते है कि इतने ही दिनो मे वहा के उद्योग-धधो तथा जन-जीवन का जितना ज्ञान हमने प्राप्त किया, उतना वहा बसे या रह रहे सामान्य भारतीयो के लिए भी इतने समय मे सभव न था—कम-से-कम जहातक वहा के अनुभव लेने का प्रश्न है।

इस सबकी जो छाप पड़ी, उससे कहा जा सकता है कि ब्रिटेन लडाई की क्षति और साम्राज्य-ह्रास के धक्के से सभल

रहा है। अग्रेजो का साहस और अनुशासन अनुकरणीय है। ब्रिटेन की पूर्व-प्रतिष्ठा को वनाये रखने के लिए वहा की सरकार और लोग प्रयत्नशील है। रहन-सहन का स्तर वहां हमसे वहुत ऊंचा है। उद्योगो और वैज्ञानिक अनुसधानों मे अगली पक्ति मे रहने की चेष्टा है। जो देश या लोग ब्रिटिश साम्राज्य से स्वतत्र हुए, उनके प्रति अदर से चाहे जो भावना हो, पर जाहिरा उनके प्रति कोई दुर्भावना नही है और उन्हे बरावरी के नाते अपने साथ रखने की ही इच्छा है। भारत के प्रति भी जाहिरा कोई दुर्भावना हमे वहां नही मिली, वल्कि चीन द्वारा भारतीय सीमा पर किये गये अतिक्रमण पर वहा चिंता और रोष का प्रदर्शन ही हमे सर्वत्र मिला।

"इतने पर भी भारत शात क्यो है और कोई जवाबी कार्रवाई क्यों नही करता ?" यह जिज्ञासा सर्वत्र मिली। इसी तरह भारतीय स्थल-सेनाध्यक्ष जनरल तिमय्या के इस्तीफे की खबर से शासन से उनके मतभेद की कल्पित प्रतिक्रिया पर भी विशिष्ट ब्रिटिश लोगों को बेचैन पाया। साथ ही यह प्रश्न भी अकसर सामने आता था कि नेहरू के वाद कौन आगे आयेगा ? कहने की जरूरत नही कि इन चर्चाओ को प्रोत्साहन भारत से गई खबरो से ही मिलता है और इनसे भारत के प्रति अच्छी भावना के बजाय शकाशीलता ही पैदा होती है। यह सचमुच आश्चर्य की बात थी कि इन चर्चाओ मे जितनी दिलचस्पी अग्रेज लोगो की सामने आई, उतना उनकी तरफ से यह स्पष्ट आश्वासन नही मिला कि चीन-भारत के मामले में ब्रिटेन निश्चित रूप से भारत के साथ होगा। ऐसा जरूर लगा कि हमारी इस मुसीबत से हमे यह मनवाने की कोई भावना

न हो कि सैनिक गुटबदी का हम जो विरोध करते है, वह ठीक नही है और विश्व की वर्तमान गुटबदी में हमे किसके साथ रहना चाहिए, यह अब हमारी समझ मे आ जाना चाहिए। मेकमेहन रेखा के बारे में भी, जो स्वय अग्रेजो की देन है, ब्रिटिश सरकार का कोई स्पष्ट वक्तव्य हमारे देखने में नही आया, यद्यपि निजी बात-चीत में जिम्मेदार व्यक्तियो ने इस संबध मे स्पष्टतः हमारा समर्थन किया।

—लेखक

विषय-सूची

आज का इंग्लिस्तान

: १ :

दिल्ली से लंदन

स्वभाव से यात्रा-भीरु और सकोचशील होने के कारण ब्रिटेन-यात्रा के निमत्रण को पाकर पहली प्रतिक्रिया न जाने की हुई। साथियो के प्रोत्साहन और यात्रा से सीखने-समझने का नया अवसर मिलने के प्रलोभन के बावजूद मन मे हैरानी थी, क्योकि विदेश-यात्रा की अनुभवहीनता तथा अपनी कमजोरियो का भान मुझे अदर से बहुत उत्साहित नही कर रहा था। लेकिन आखिर साथियो-स्नेहियो का आग्रह ऊपर रहा। हमारे जनरल मैनेजर महोदय ने भी निमत्रण स्वीकार करने को कहा। फलतः मैंने अपनी स्वीकृति भेज दी और यात्रा की तैयारी में लग गया।

तैयारी इसलिए कि विदेश गये हुए मित्रो ने बताया कि अमुक-अमुक वस्त्र और वस्तुए विदेश जाने के लिए आवश्यक हैं। साथ ही पार-पत्र (पासपोर्ट), विदेशी विनिमय, हेल्थ सर्टिफिकेट (स्वास्थ्य-प्रमाण-पत्र) तथा इनकम टैक्स क्लियरेस सर्टिफिकेट (आयकर चुकता कर देने का प्रमाण-पत्र) के बगैर विदेश-यात्रा सभव ही नही थी। इन सबके लिए दौड-धूप करनी पडती है, मुझे भी करनी पड़ी। यह जीवन का नया अनुभव था। और चेचक का तो नही, किंतु हैजे के टीके का पहली बार काम पडा। दूसरी बातो के लिए भी खानापूरी की गई और

जाने के ऐन वक्त तक सब इतजाम हो गया।

लदन के लिए पालम हवाई अड्डे से हमारा हवाई जहाज रात के करीब पौने नौ बजे रवाना होना था। विदाई के वक्त परिजनो, सबधियो, साथियों और स्नेहियो की भारी उपस्थिति ने कुछ देर के लिए मन के सकोच को विस्मृत कर दिया और सबकी भावभीनी सद्भावनाओ के बीच हम बी० ओ० ए० सी० के कोमेट विमान से लदन के लिए आकाश मे उड गये। हवाई यात्रा मै पहले भी कर चुका था, इसलिए उसमे कोई अटपटापन नही लगा। हा, विदेश-यात्रा और समुद्र पर उडान का यह पहला अवसर था। लेकिन भय के बजाय नये अनुभव की उत्सुकता ही मन मे अधिक थी। कई समुद्रो और कई महाद्वीपो की भूमि पर इस हवाई यात्रा मे हम समुद्र की सतह से ३७-३८ हजार फुट की ऊचाई तक उडे, लेकिन हवाई जहाज के वायुअनुकूलित और आरामदेह होने के कारण न तो धक्के लगे, न तेज आवाज ने कानो को तकलीफ दी, न मिचलाहट ही हुई।

मित्रो के कहने पर सूट मैंने बनवा लिया था, लेकिन विपरीत सलाहो के बावजूद मै धोती भी ले गया और हवाई जहाज मे धोती-कुरता ही पहने रहा। स्टुआर्ड को साडी मे देखकर अच्छा लगा, क्योकि यूरोपीय वेश-भूषा के वातावरण मे वह अपवाद था। हवाई यात्रा के दूसरे मुकाम (बेरूत) पर स्टुआर्ड परिवर्तन के साथ भारतीयता का वह चिह्न भी समाप्त हो गया। अब हम सर्वथा नये वातावरण मे थे।

रात की उडान मे हवाई अड्डे से चलते या हवाई अड्डे पर उतरते समय बिजली की मनोहारी चमक-दमक के अति-

रिक्त, या रात चादनी हो, तो आकाश मे चमकते हुए शुभ्र चंद्र एव उसकी चद्रिका तथा आकाशमडल मे विद्यमान तारो के सिवा, कुछ नही दिखाई देता। कोई नगर आता है, तो उसकी झिलमिल रोशनी भी दिखाई दे जाती है। दिन मे भी जब हवाई जहाज ऊचाई पर होता है, तो बारीकी से देखने पर ही यह पता लगता है कि हम जमीन के ऊपर उड रहे है या पानी के। हवाई अड्डे पर उतरते समय जब विमान निचाई पर आता है, तो स्थल होने पर नगर की बिजली की रोशनिया क्रमशः तेज होने लगती हैं और समुद्र के ऊपर उसमे मे चल रहे जलपोतो की रोशनी यहा-वहा दिखाई पडती है। ऊचाई ज्यादा होने पर विमान प्रायः बादलो के ऊपर होता है और तब नीचे या तो कुहरा, या धुनी जाती हुई रूई के बडे-बड़े ढेरो की तरह बनते हुए बादल दिखाई पडते हैं। हवाई अड्डे पर उतरते या वहा से चढते समय उस स्थान का विहगावलोकन भी होता है, जो आखो को आकर्षित ही करता है।

रात को हमारा पहला मुकाम, पालम के बाद, बहरीन हुआ, जो पश्चिमी एशिया मे एक शेख के अधीन तैल का बडा क्षेत्र है।

'फ्री पोर्ट' या चुगी-मुक्त हवाई अड्डे की बात हम सुना करते थे, परतु बहरीन मे उसका प्रत्यक्ष अनुभव हुआ। हवाई जहाज के सफर मे विमान रुकने पर यात्री उसमे बैठे नही रहते, बल्कि हवाई अड्डे के प्रतीक्षालय मे उन्हे जाना पडता है, जिससे इस बीच विमान की पूरी तरह जाच-पडताल करके अगली उडान के लिए उसे तैयार कर लिया जाये। रात के वक्त बच्चो और बूढो के लिए इस तरह नीद और आराम

में विघ्न पडना कुछ असुविधाजनक तो अवश्य लगता है, लेकिन इससे हवाई अड्डे को देखने और वहां से चीजे खरीदने का अवसर मिल जाता है। जो हवाई अड्डे चुंगी-मुक्त होते है, यानी जहा बिकनेवाले माल पर वहा की सरकार कर नही लगाती, वहा माल अपेक्षाकृत सस्ता भी मिल जाता है। बहरीन मे इसीलिए यात्रियो ने आधी रात मे भी अच्छी खरीदारी कर ली।

बहरीन से चलकर लेबनान का बेरूत आया। बेरूत भी था तो संभवतः फ्री पोर्ट ही, और वहा का हवाई अड्डा बहुत बड़ा तथा आधुनिक था, मगर वहा एक तो यात्रियो के प्रतीक्षालय अथवा जलपानगृह तक जाने मे पूछताछ या चैकिंग ज्यादा थी, पासपोर्ट भी लेकर वापसी के वक्त ही लौटाये जाते थे, दूसरे सामान्य दिलचस्पी की चीजे दिखाई नही दे रही थी, इसलिए वहा खरीदारी का वह दृश्य नजर नही आया।

बेरूत से चलकर हम यूरोप की भूमि मे जूरिख (स्विट्जरलैंड) पहुचे। पहली छाप यह पडी कि यूरोपीय जीवन व्यवस्थित, साफ-सुथरा और शिष्ट है। हवाई अड्डा तो बेरूत का भी बहुत बडा था, पर जूरिख का साफ-सुथरापन विशेष ध्यान आकर्षित करता था।

विमान मे कुछ खराबी आ जाने के कारण एक घंटे के बजाय कोई पाच घंटे हमे वहा रुकना पडा। इसी बीच हवाई अड्डे पर स्थित सुप्रसिद्ध स्विस घड़ियो की दूकान भी खुल गई थी। यही से चीजो के दाम मशीन से जोड़कर हिसाब लगाने का तरीका भी शुरू हो जाता है, जो लंदन तथा यूरोप के अन्य नगरो मे भी हमे मिला।

जूरिख से मध्याह्न मे रवाना होने के कारण जूरिख का रमणीय दृश्य दृष्टिगोचर हुआ और फिर लदन मे उतरते समय लदन का। हमने वहा के मकानो, खेतो आदि का विहगावलोकन भी किया। ऊपर से ऐसा लगता था, मानो मकान, मैदान, खेत, सडक सब व्यवस्थित है। मकानो के आगे हरियाली (वहा प्रायः हर मकान के आगे छोटा बगीचा या बगिया रखने का रिवाज है) और मकानो की बहुत-कुछ एकरूपता (भव्य इमारतो के अलावा प्राय काटेजनुमा छोटे-छोटे मकान, जिनमे ऊपर खपरैल का छप्पर होता है) देखकर मन प्रसन्न हुआ।

जिस टेम्स नदी के बखान हमने पाठ्य पुस्तको तक मे पढे थे, उसकी सूक्ष्मता को देखकर हैरानी हुई। इसी तरह इग्लिश चैनल भी, पार किये समुद्रो के सामने, छोटा ही लगा।

फिर भी लदन हमे चमत्कृत करने के लिए कम नही था, क्योकि विशाल ब्रिटिश साम्राज्य की वह राजधानी रहा है और एक सदी के ब्रिटिश शासन मे उसके गौरव व उसकी महिमा का बखान हमारे जन्म के साथ घुट्टी मे पिलाया गया और साहित्य द्वारा हमारे मस्तिष्क में बिठाया गया था। ब्रिटिश शासन के दिनो मे जिस भूमि की यात्रा तीर्थ-यात्रा से कम नही थी और जिसके निवासियो को हमसे हर तरह ऊचा मानने के लिए हमे प्रेरित किया गया था, उसी भूमि मे और उसी देश के निवासियो के बीच अपने को पाकर मन मे एक अजीब स्फुरण का होना स्वाभाविक था। फिर हम तो उसके मेहमान के रूप में, ब्रिटिश सरकार के अतिथि बनकर, वहा उपस्थित थे। इससे मन में आत्मगौरव की भावना उत्पन्न होनी ही थी।

इन भावनाओ और अंग्रेजो को निकट से जानने की उत्सुकता के साथ हमने लदन मे पदार्पण किया।

हवाई जहाज के समय-क्रम के अनुसार हम रात के ८।।। बजे पालम से चलकर सबेरे ८।। बजे लदन पहुचनेवाले थे, यानी लगभग १२ घटे मे, लेकिन वस्तुत १७।। घटे की यात्रा थी, क्योकि भारतीय समय से लदन के समय मे ५।। घटे का अतर है। पहले तो दोनो जगह के समय का अदाज लगाना समझ मे नही आता था, लेकिन एक मित्र ने उसका सीधा गुर बताकर समस्या हल कर दी। वह गुर यह है कि आप भारत मे हो, तो अपनी घडी को उलटा कर ले, यानी अपनी घडी के १२ को ६ और ६ को १२ मानकर गिनती करे। इस तरह करने पर लदन का ठीक समय आप जान सकेगे। लदन मे लदन के समयवाली घडी को ऐसा करने पर भारत का समय जाना जा सकता है। यह अतर क्यो होता है ? इसका कारण पृथ्वी का घूमना और सूर्य का पूंर्व की ओर निकलना है। पूर्व से पश्चिम की ओर जाते हुए या पश्चिम से पूर्व की ओर आते हुए समय का अतर पडना ही चाहिए, क्योकि पश्चिम की अपेक्षा पूर्व मे सूर्योदय और सूर्यास्त पहले होता है।

२ :

जन-जीवन का अनुभव

ब्रिटेन-यात्रा का हमारा मूल कार्यक्रम एक महीने का था। लेकिन लदन पहुचने के बाद आमत्रणकर्ताओ और हमारे बीच जब कार्यक्रम को अतिम रूप दिया जाने लगा, तो अधिक-से-अधिक देखने की हमारी इच्छा और सीमित समय का मेल नही बैठता था। अत कार्यक्रम चार दिन के लिए बढाया गया। निमत्रण के बाद ब्रिटेन मे नये चुनाव होने की घोषणा भी हो गई थी, इसलिए पार्लमेंट-विसर्जन और चुनाव देखना भी उसमे शामिल किया गया। फिर भी सब-कुछ हम नही देख पाये और स्काटलैंड व आयरलैंड देखने की मन-की-मन मे रह गई। लेकिन जितना कुछ देखा, वही सब हजम करना आसान नही था, क्योकि ब्रिटेन-जैसे उद्योग-प्रधान देश मे सबकुछ समझने के लिए ऊचे दरजे का तकनीकी और वैज्ञानिक ज्ञान अपेक्षित है।

ब्रिटेन-यात्रा का प्रारभिक दौर लदन और उसके आस-पास ही रहा। सरकारी अफसरो से औपचारिक तथा भारत और ब्रिटेन के व्यापारिक सबधो पर हुई बातचीत के अलावा भारत से सबधित प्रमुख उद्योगपतियो से मिलने का अवसर भी मिला। इस कामकाजी बातचीत के अलावा कुछ सैर की और विविध राजनीतिक दलो तथा ट्रेड यूनियन काग्रेस एव

पत्रकारो के सगठन (नेशनल यूनियन ऑव जर्नेलिस्ट्स) का ज्ञान प्राप्त करने उनके कार्यालयो मे गये। रायटर की जिस समाचार ऐजेसी से हमारे देश के अखबार विदेशी समाचार प्राप्त करते हैं, उसके कार्यालय में भी गये और किस तरह समाचार प्राप्त करके विविध देशो को भेजने के लिए छांटे जाते हैं, इसका निरीक्षण किया। राष्ट्रमडल के विद्यार्थियो के अध्ययन-केंद्र—रायल कामनवेल्थ सोसायटी—भी गये। वहा हमारे मेजबान चैथम हाउस मे जाति-सबधी अध्ययन के संचालक थे, जो भारतीय सिविल सर्विस मे रह चुके है। पत्रकारो से पहली मुलाकात इडिया हाउस के भोज मे हुई, उसके बाद 'लंदन टाइम्स' के वैदेशिक सपादक से उनके कार्यालय मे तथा कुछ विशिष्ट पत्रकारो से एक भोज मे सपर्क और वार्त्तालाप हुआ। कल-कारखाने तो हमने बाद मे (कार्डिफ तथा मैंचेस्टर जाने पर) देखे, किंतु जिस परमाणु शक्ति का इस समय बोल-बाला है, उसका भव्य कारखाना (ब्राडवेल ऐटॉमिक पावर स्टेशन) एसेक्स मे देखकर यह अनुमान लगाना कठिन न रहा कि ब्रिटेन आधुनिक विज्ञान और टेकनोलाजी मे किसीसे पीछे न रहने की बाजी लगा रहा है।

उद्योगप्रधान नगरी मे स्वाभावतः हमारी इच्छा यह जानने की हुई कि मालिक-मजदूरों के बीच सबधो की समस्या को कैसे हल किया जाता है। लदन मे महगाई का एक कारण आमतौर पर यह बताया जाता था कि मजदूरी या वेतन बहुत बढ जाने से चीजे महगी पड़ती हैं। तेल आखिर तिलों से ही निकाला जा सकता है! दूसरी ओर मजदूरी या वेतन पानेवालो की यह आम शिकायत है कि चीजो की

बढती हुई महगाई से जीवन-व्यय जिस तरह बराबर बढ रहा है, उसको देखते हुए उनको मिलनेवाली मजदूरी या वेतन अपर्याप्त है।

ट्रेड यूनियन नेताओ से हुई बातचीत मे हमे बताया गया कि निस्सदेह ट्रेड यूनियन सगठन व्यवस्थित और शक्तिशाली है, लेकिन सारे देश के लिए पारिश्रमिक की न्यूनतम राशि (नेशनल मिनिमम) निश्चित करा लेने के बाद उनका मुख्य काम यह देखना-भर है कि जीवन-व्यय अगर बढे, तो उसी अनुपात मे पारिश्रमिक मे भी वृद्धि हो। व्यक्तिगत मामलो को बहुत महत्व नही दिया जाता।

पत्रकारो के सगठन मे जब हमे पता चला कि बेकारी का भत्ता पत्रकारो के लिए निश्चित है, तो स्वभावत यह जानने की उत्सुकता हुई कि इस मद मे सगठन को कितना खर्च करना पडता है। हमे जानकर आश्चर्य हुआ कि इस मद का खर्चा नगण्य है, क्योकि सामान्यत. कोई पत्रकार एक या डेड सप्ताह से अधिक बेकार रहता ही नही।

स्पष्टतः भारत की स्थिति से इस स्थिति का मुकाबला नही किया जा सकता, फिर भी अगर हमारे यहा का श्रमिक आदोलन आपसी समझौते या अन्य उपायो से देश-भर के लिए पारिश्रमिक की न्यूनतम राशि निश्चित करा ले और यह तय करा ले कि जीवन-व्यय मे वृद्धि के अनुपात से उसमे भी वृद्धि होती रहेगी, तो आपसी सबधो को कटुता से बचाया जा सकता है।

वहा लोगो को प्राप्त पारिश्रमिक या वेतन की जानकारी पाकर हम चकित हो जाते थे और समझते थे कि यहा के

लोग सचमुच बडे भाग्यवान है। लेकिन वहा का जीवन-स्तर जितना ऊचा हो गया है, या यो कहिये कि जिस तरह रहने के लोग आदी हो गये हैं, उसमे वहा के लोगो का यह कथन अस्वाभाविक नही था कि यदि पति-पत्नी दोनो कोई काम न करे, तो वहा सामान्य परिवार का निर्वाह भी कठिन हो जाये।

इस बात की ठीक प्रतीति हमे तब हुई, जब हमारी मेहमानी पर नियुक्त एक अधिकारी ने आपसी बातचीत में बताया कि वह लदन मे मकान लेकर तबतक अपनी पत्नी को नही रख सकते, जबतक कि उसे (पत्नी को) भी कोई नौकरी न मिल जाये। यह महाशय आक्सफोर्ड के एम० ए० और एक लार्ड के पुत्र थे तथा विवाह हुए बहुत समय न होने के कारण पत्नी-प्रेम मे विभोर थे। पत्नी को साथ रखने की उनकी छटपटाहट स्वाभाविक थी, पर वह मजबूर थे और पत्नी-मिलन के लिए सप्ताहात की छुट्टी की प्रतीक्षा करने के सिवा कोई उपाय न था।

लंदन मे फ्लैट (रहने के कमरे) सचमुच बहुत महगे है, इसका ज्ञान हमे तब हुआ, जब हम भारतीयो से मिले-जुले। डाक्टरी की पढाई कर रही एक बहन एक छोटे-से कमरे (कोठरी कहना ज्यादा अच्छा होगा) में—जिस तरह के कई कमरो के पीछे एक सयुक्त शौचालय, स्नानगृह और टेलीफोन था—२॥ पौंड प्रति सप्ताह (यानी सवा सौ रुपये महीने से अधिक) किराये पर रहती थी। एक मित्र, जिन्होने लदन के एक हिस्से मे मकान खरीद लिया है, अपने मकान के एक नीचे के कमरे को (जो कुछ जमीन के नीचे तथा

कुछ जमीन के ऊपर था और जिसके साथ पाखाना व छोटी-सी रसोई थी) ४ पौंड प्रति सप्ताह (यानी दो सौ रुपये महीने से अधिक) पर देने की तैयारी कर रहे थे।

इस सबसे हमें लगा कि जीवन-स्तर और महगाई का चोली-दामन का सबध है, साथ ही यह भी खयाल आया कि ऊंचे जीवन-स्तर के बाद भी जब आदमी अपनी मनोकामना पूरी करने मे आर्थिक दृष्टि से अपने को असमर्थ पाता है, तो शाति और आनद के लिए जीवन-स्तर के सिवा कोई अन्य उपाय आवश्यक है।

धर्म या अध्यात्म सभवत उस उपाय की खोज का ही परिणाम है। भौतिक साधनो और विज्ञान द्वारा प्रकृति पर कब्जे से मनुष्य की इच्छाओ का अत नही होता और अधिकाधिक सुख-सुविधाओ की हविस बढती जाती है। नतीजा यह होता है कि आत्म-तृप्ति और आत्म-सतोष वह अनुभव नही कर पाता, जिससे जीवन मे अतृप्ति एव अशाति रहती है। लाचार होकर, इच्छा न होते हुए भी, किसी अव्यक्त शक्ति का ध्यान आता है। इसीको धर्म या अध्यात्म का रूप देकर अध्यात्मवादियो और धर्माचारियो ने पूजार्ह बना दिया है। इग्लैंड के उद्योग-प्रधान जीवन मे चर्च का वाह्य प्रभाव वहुत स्पष्ट है। जहा हमारे यहा आधुनिक शिक्षा-प्राप्त धर्म के नाम पर नाक-भौंह सिकोडते हैं, लदन में तथा इग्लैड के हर स्थान मे हमे चर्च वडे गौरव के साथ दिखाये गये और हमे आश्चर्य हुआ कि पार्लमेंट के साथ और कैंब्रिज विश्वविद्यालय के साथ भी चर्च अभिन्न अग की तरह जुडा हुआ तथा गौरवान्वित है।

लदन पहुचते ही पहला अनुभव बड़ा हृदयस्पर्शी हुआ। अपने देश से दूर, सर्वथा दूसरी भाषा और भिन्न संस्कृति के देश में किसी अंग्रेज से अपनेपन की आशा मैंने नही की थी। लेकिन हवाई जहाज से उतरकर होटल पहुचते ही मुझे एक टेलीफोन-सदेश मिला। लदन मे 'हिंदुस्तान टाइम्स' सस्थान के विशेष प्रतिनिधि श्री गुथर स्टाइन को मेरे उस दिन लदन पहुचने की सूचना मिल चुकी थी। हवाई जहाज चूकि सवेरे पहुचनेवाला था, इसलिए उन्होने फोन किया था और हवाई जहाज मे विलब की खबर पाकर उन्होंने मेरे लिए यह सदेशा छोडा था कि आने पर उनसे फोन पर संपर्क करू। अंग्रेजों से फोन पर बात करने का मै अभ्यस्त नही हूं, साथ ही अपनी अंग्रेजी पर भी पूरा भरोसा नही था, इसलिए झिझक तो हुई, पर नये वातावरण मे जाने पर साहस करना ही पडता है। हिम्मत करके मैंने फोन मिलाकर बाते की। उन्होने मेरा स्वागत किया, और, यह जानकर कि शाम का हमारा कोई कार्यक्रम नही है, तुरत आकर मुझे तथा हमारे एक साथी को अपने घर ले गये।

श्री स्टाइन के बारे मे सिवा इसके मैं कुछ नही जानता था कि वह एक अच्छे पत्रकार हैं और चीन के स्वानुभवो से उन्होने चीन के सबध मे एक अच्छी पुस्तक लिखी है। श्रीमती स्टाइन की अच्छी मेहमानवाजी की भी बात सुनी थी, लेकिन सचमुच स्टाइन-दपती इतने अच्छे हैं, इसका अनुभव मिलने पर ही हुआ।

घर पहुचने के थोडे ही समय बाद, जब श्रीमती स्टाइन की दफ्तर से और उनके पुत्र रिचार्ड की स्कूल

से वापसी हो गई, हम लोग ऐसे हिल-मिल गये, मानो एक परिवार के ही सदस्य हो। झिझक की जगह स्नेह ने ले ली और हम लोग बातो मे ऐसे घुल-मिल गये, मानो बहुत पहले से परिचित और स्नेही हो। बाते देश-विदेश की और उन लोगो के सबध मे भी चली, जिन्हे स्टाइन-दपती जानते थे और जिनके बारे मे उनकी भावनाए थी।

स्वभावतः हमारी बातचीत मे स्वर्गीय देवदास गाधी और उनके परिवार का भी जिक्र आया। श्री और श्रीमती स्टाइन दोनो ही उनके अवसान पर दुखी थे और उनके बारे मे अनेक हृदयस्पर्शी सस्मरण उनके पास थे। मैं तो देवदासजी के सपर्क मे लबे अरसे से रहा था—सन १९३६ से उनके निर्देशन मे काम करके उनके महान व्यक्तित्व और दूसरो से काम लेने की उनकी कला का अनुभव करता रहा हू—उस चर्चा ने स्वभावत उनकी अनेक स्मृतिया जागृत कर दी, और मन-ही-मन मैने उन्हे प्रणाम किया।

स्टाइन-दपती ने बातो से ही तृप्त नही किया, स्वय बनाये शुद्ध भारतीय भोजन से भी हमारा सत्कार किया। हमारे लिए यह आश्चर्य की बात थी कि भोजन न केवल निरामिष था, बल्कि स्टाइन-दपती ने भी वही खाना हमारे साथ खाया, साथ ही शराब की जगह 'स्क्वैश' और 'जूस' ही पिये गये। सुदूर और अपरिचित देश मे पहुचते ही एक विदेशी दपती द्वारा हमारी भावनाओ और रुचि का इतना खयाल हृदय को स्पर्श करनेवाला था।

लेकिन दूसरे दिन से जो हमारा सरकारी कार्यक्रम शुरू हुआ, उसमे हुए वार्त्तालापो से हमे यह प्रतीति नही हुई कि

कारो मे किसी भारतीय की गणना शायद ही की जाती हो।

इससे भी बडी बात यह है कि हमारे, भारतीय जनता के, दिल जीतने की कोई भावना अग्रेजो मे नही दिखाई दी। शायद उनके दिलो मे अदर-अदर अब भी यही भावना है कि वे श्रेष्ठ और हम हीन है। केब्रिज जाने पर इस तरह के विचार खासतौर से मन मे पैदा हुए। बात यह हुई कि केब्रिज विश्वविद्यालय जब हम गये, तो जिस ट्रिनिटी कालेज मे नेहरूजी पढे हैं, उसमे हमारा सर्वाधिक आकर्षण स्वाभाविक था। उसमे घुमाते हुए हमे यह तो बडे चाव से बताया गया कि अमुक कमरे मे आइन्स्टीन रहे थे और अमुक मे न्यूटन, लेकिन हमारे नेहरूजी का कमरा कौनसा था, यह हमारे पूछने पर भी नही बता सके। आग्रह करने पर बताया गया कि वह शायद बाहर रहते थे और फिर बाहर के एक 'एन-क्लेव' मे ले जाकर कहा गया कि वह यहा ६ या ८ नबर के कमरे में रहे होगे। हमे आश्चर्य हुआ कि जिन नेहरूजी को हमारा राष्ट्र इतना मानता है और जो आज विश्व के इने-गिने व्यक्तियों में माने जाते हैं, उनके कमरे का पता लगाकर उस पर उसी तरह गर्वानुभव की कोई भावना नही, जिस तरह अपने लोगो के लिए है।

इसे हृदयस्पर्शी रुख का अभाव न कहे, तो और क्या कहे? या यह मानें कि इतने दिनो तक भारत पर शासन करने के कारण अग्रेजो के अदर पैदा की गई अपने को श्रेष्ठ तथा भारतीयो को हीन मानने की भावना की ही यह विरासत है? कुछ भी हो, अग्रेजो को गभीरता से सोचना चाहिए कि क्या यह वाछनीय है, और स्थिति बदल जाने पर भी क्या इसमे परिवर्तन नही होना चाहिए?

: ३ :

पार्लमेंटों की जननी

ब्रिटेन की महानता के गुणगान हमने इतने सुने-पढे कि वहा की हर एक चीज से चकाचौंध हो जाने की सभावना थी। लेकिन उसको देखने के बाद कहा जा सकता है कि ऐसी कोई बात नहीं है। इसमे शक नही कि हमारे देश के मुकाबले ब्रिटेन उद्योग, समृद्धि और मानवीय प्रयत्नो मे बहुत आगे बढा हुआ है, लेकिन है आखिर वह छोटा देश ही—भूमि-विस्तार और जनसख्या दोनो दृष्टियो से। उसकी महानता इसी पैमाने से है कि अपेक्षाकुत छोटा होते हुए भी वह इतना शक्तिशाली, उत्फुल्ल और विकसित है।

'पार्लमेटो की जननी' के रूप मे जिस ब्रिटिश पार्लमेट की गौरव-गरिमा हमारे ऊपर छाई हुई है, लदन जाकर उसे देखने का लोभ सवरण करना सभव नही था। नये चुनाव के लिए पार्लमेट-विसर्जन के दिन वह सुयोग हमे उपलब्ध हुआ। इससे न केवल पार्लमेंट-भवन, बल्कि सक्रिय रूप मे पार्लमेट को देखने की इच्छा भी पूरी हुई।

पार्लमेंट-विसर्जन का दिन होने से उस दिन सभा-भवन भरा था। हमने सरकारी तथा गैरसरकारी पक्ष के प्रमुख व्यक्ति ही नही देखे, उनके भाषण भी सुने। अध्यक्ष श्री (अब लार्ड) मारिसन, प्रधान मत्री मैकमिलन, मजदूर दल के नेता श्री गेट्स-

केल, उदार दल के उपनेता और रेडिकल पार्टी के प्रवक्ता के भाषण थे तो औपचारिक, और पार्लमेंट-विसर्जन के विधि-विधान भी (महारानी का सदेश, दूत के साथ हाउस ऑव कामन्स के सदस्यो का हाउस ऑव लार्ड्स मे जलूस के रूप मे जाना, आदि) औपचारिक ही थे, पर उससे ब्रिटिश पार्लमेंट का हूबहू नकशा सामने आ गया। फिर एक दिन पार्लमेंट-भवन (वेस्टमिंस्टर हाल, हाउस ऑव कामन्स तथा हाउस ऑव लार्ड्स) को वैसे भी जाकर देखा।

ब्रिटिश पार्लमेंट चाहे 'पार्लमेंटो की जननी' हो, पर उसे देखकर चकाचौंध होने के बजाय 'नाम बड़े दर्शन छोटे' वाली उक्ति ही सहसा दिमाग मे आई। लदन के बारे मे हमें बताया गया कि उस पर आबादी और उद्योगो का बोझ इतना बढता रहा है कि उसमे सुनियोजित विस्तार की गुजाइश कम रही और इसलिए भव्य इमारतो के बावजूद वह बहुत ही घिरा हुआ-सा है। सडके और चौडी करने की गुंजाइश नही है और न पुराने प्रासादो को नई स्थिति के अनुसार फैलाने की जगह है। यही कारण है कि पार्लमेंट-भवन जब बना होगा, उस समय की स्थिति के अनुसार वह चाहे ठीक रहा हो, पर अब छोटा मालूम पड़ता है।

हाउस ऑव कामन्स मे, पार्लमेंट-विसर्जन के दिन हमने देखा, भारतीय लोकसभा जैसी भव्यता और कुशीदगी नही है। हमारे यहां गोलाई मे भवन है, वहा लंबा। एक सिरे पर अध्यक्षासन और ऊपर नाट्यगृह की तरह ऊपर-नीचे कई मजिलों में पत्रकारो के बैठने की गैलरियां। दाहिनी ओर शासनारूढ़ पक्ष के बैठनें की बेचें और बाईं ओर विरोधी-पक्ष तथा दूसरे

पक्षो के लिए बेचे । इनके ऊपर पत्र-प्रतिनिधियो या दूसरे दर्शको की गैलरिया । अध्यक्ष के सामने के सिरे पर, दरवाजे के ऊपर, ऊपर-नीचे फैली हुई विशिष्ट तथा अन्य दर्शको की गैलरिया । यो गुजाइश काफी की गई है, फिर भी जगह छोटी है और सदस्य ही यदि सारे आ जाये, तो उन्हीके बैठने की जगह नही है । हम गये, उस दिन भी सदस्य न केवल एक-दूसरे से भिचे बैठे थे, बल्कि कुछ खडे भी थे । सदस्यो की बेचो के आगे टेबल की गुजाइश ही नही थी और प्रधान मत्री को भी अध्यक्ष के आगे की मेज के पास, जो उनके निकट थी, खडे होकर ही भाषण करना पडा । दूसरो ने प्रायः अपनी सीट के पास खडे होकर ही भाषण किया ।

ब्रिटिश पार्लमेट की महानता, हमें लगा, वस्तुतः इस बात मे है कि इतने देशो पर उसके द्वारा शासन किया गया और अब भी किया जाता है। साम्राज्य का पहलेवाला रूप चाहें अब नही रहा है, लेकिन उसकी प्रतीति अभी भी है । पार्ल-मेट-भवन को देखते समय हमें बताया गया कि इसका यह अश अमुक देश की देन है और यह उस देश की। हमारे देश का दिया भी एक दरवाजा है, जो याद दिलाता है कि भारत भी कभी इग्लैड की दासता मे रहा है । हमारे एक साथी ने तो व्यंग्य मे कहा भी कि सबकुछ दूसरे ही देशो का है और इंग्लैड का कुछ नही, ऐसा क्यो न कहे ! यह चाहे हलकेपन से कहा गया हो, पर ब्रिटेन के लिए सचमुच यह गर्वानुभव की बात है कि छोटा-सा देश होते हुए भी अपनी बुद्धि और शक्ति से उसने इतना बडा साम्राज्य रखा, जिसमे सूर्य कभी अस्त ही नही होता था । जो पार्लमेट इतने बड़े साम्राज्य को नियत्रण में

रखे, उसका रूप चाहे छोटा हो, पर उसकी महानता को कोई कैसे अस्वीकार कर सकता है ?

दूसरी महानता ब्रिटिश पार्लमेंट की यह है कि वह बहुत पुरानी है। पार्लमेंटरी सिस्टम या शासन की संसदीय प्रणाली हमारे-जैसे देशो ने उसीसे ग्रहण की है और इसलिए अपने लंबे जीवन मे उसने जो परंपराएं कायम की है, उन्हीसे हम या हमारे देश प्रकाश पाते है। इस पद्धति का ही एक परिणाम आत्मानुशासन या 'सेल्फ डिसिप्लिन' है, जिसमे अंग्रेजों ने निश्चय ही बहुत स्वामित्व पा लिया है और अपने बड़े देश तथा संसदीय एवं दूसरे भव्य प्रासादो के बावजूद हमें उनसे बहुत-कुछ सीखना है। इसलिए ब्रिटिश पार्लमेंट को देखकर हमें 'नाम बड़े दर्शन छोटे' वाली युक्ति याद आई, तो इससे यह नही समझना चाहिए कि उसके महत्व को हमने कम आंका या उसकी कार्य-पद्धति ने हमे आकर्षित नही किया। इसके विपरीत यदि यह निष्कर्ष निकाला जाये, तो ज्यादा अच्छा होगा कि बड़े काम करने के लिए इमारतो की भव्यता या उनका आरामदेह होना उतना जरूरी नही है, जितना कि बड़े काम करने का दृढ निश्चय और उसके लिए निजी तथा राष्ट्रीय चरित्र का विकास आवश्यक है। अंग्रेजी शासन से मुक्त होकर भी अंग्रेजो से यह अवश्य सीखा जा सकता है।

: ४ :

आम चुनाव

चुनाव के समय हम ब्रिटेन मे थे, इसलिए चुनाव देखने का अवसर भी मिल गया। पार्लमेंट-विसर्जन के तत्काल बाद चुनाव की तैयारी शुरू हो गई। हमे आश्चर्य हुआ कि हमारे यहा की तरह गरमी और धूम वहा की चुनाव हलचल मे नही थी। अखबारो में हमें अलग-अलग पार्टियों की तरफ से, उनके दृष्टिकोण से लिखे गये, लेख मिले। कुछ उम्मीदवारो की चर्चा। ऐन वक्त पर मतदान-क्षेत्र के हिसाब से उम्मीदवारो की पूरी सूची भी। समाचारों मे भी थोडी-बहुत चर्चा मिल जाती थी। चुनाव के दिन कुछ अग्रलेख भी हमने देखे। लेकिन हमारे यहा अखबार जैसे चुनावमय हो जाते है, वैसा नही लगा।

चुनाव-सभाओ मे भी हम गये। चुनाव के वक्त हम मैंचेस्टर मे थे, अतः वही दो चुनाव-सभाए हमने देखी—एक कजरवेटिव पार्टी (अनुदार दल) की और दूसरी लेबर (मजदूर) पार्टी की। दोनो उम्मीदार विशिष्ट और ख्यातिप्राप्त थे। सभाए हमारे यहा की तरह खुले मैदान मे नही, हाल में थी। कजरवेटिव उम्मीदवार सर राबर्ट कैरी की चुनाव-सभा मे जिस समय हम गये, तो मैं धोती और शेरवानी पहने हुआ था। सभवतः इसीलिए हमारे हाल में घुसते

ही बड़े तपाक से उन्होने हमारा स्वागत किया और सबसे पहले मुझ से ही हाथ मिलाकर बोले—"आई एम वेरी ग्लैड दैट यू हैव कम," (आप आये, इसकी मुझे बड़ी खुशी है)। स्वभावतः इसका हम पर, और खासतौर से मुझ पर, असर पडा, लेकिन सभा शुरू होने से हमारे वापस जाने तक सभा-भवन में शायद ४० से ज्यादा श्रोता नही होगे, इससे निराशा भी हुई। मजदूर-पक्षीय श्री जिलियाकस की सभा में निस्सदेह भीड और जान थी, लेकिन सभा-भवन भरा हुआ होने के बावजूद हमारे यहां की साधारण सभाओं से भी वह सभा मेल नही खाती थी।

भाषण दोनो सभाओ मे मजेदार हुए, लेकिन हमे असली मजा मजदूर-पक्षीय सभा के बाद सभा-भवन से निकली भीड़ मे आया। चुनाव-सभाओ मे वहां हमने देखा कि उम्मीदवार या मुख्य वक्ता के भाषण के बाद श्रोता अपनी शकाए मिटाने प्रश्न पूछते है। मजदूर-पक्षीय सभा के बाद एकत्र भीड़ के लिए मे कुछ नौजवान, जो शायद दूसरे पक्ष के थे और या तो विघ्न डालने आये थे अथवा सचमुच जिज्ञासाशील थे, जोर-जोर से कह रहे थे कि हमारी बातों का जवाब नही दिया गया। दूसरे लोग उन्हे दोष दे रहे थे। भीड में स्त्रिया और युवतिया भी थी—कुछ बूढी स्त्रिया बीचबचाव-सा कर रही थी, जबकि युवतिया झुझलाकर युवको पर उबली पडती थी। मुझे लगा, स्त्रिया सर्वत्र एक-सी हैं—भड़कना और असतुलित हो जाना उनका सहज स्वभाव है।

मतदान केंद्रो पर भी हम गये, लेकिन वहा की शाति

के नाम व मतदान-केंद्र की सूचनाएं थी, अंदर मतदान-बक्से के पास बैठे व्यक्ति पड़ताल करके मतदाता को मतपेटी मे मत डालने भेज देते थे। किसी मतदान केंद्र पर हमे भीड़ या हल्ला-गुल्ला नही मिला। शायद इसका कारण एक तो मतदाताओ का शिक्षित-समझदार होना है, दूसरे यह भी कि वहा हमारे देश की तरह बड़े-बड़े निर्वाचन-क्षेत्र नही है। हमें बताया गया कि एक चुनाव-क्षेत्र मे पाच हजार के आसपास मतदाता होते हैं, जबकि हमारे यहा लाखो पर सख्या जाती है। मतपेटी या मत डालने के बक्से वहा पार्टी या उम्मीदवारों के हिसाब से नही मिले, एक ही पेटी मे सब अपना मत डालते हैं और मतदान-समाप्ति के तत्काल बाद पूर्वनियोजित व्यवस्था से मतगणना शुरू हो जाती है। चुनाव-अधिकारी बहुत व्यस्त नही थे, यह इसीसे जाना जा सकता है कि एक-दो जगह हमने उनसे बातचीत करके जानकारी भी हासिल की। बूढो को सहारा देकर मतदान की जगह ले जाते हुए भी हमने देखा। इसी तरह मतदान के लिए मतदाताओं को मोटरो पर लाते हुए भी। बताया गया कि निजी या बिना किराये की मोटरो में मतदाताओ को ले जाया जा सकता है, जिससे निस्सदेह मालदारों का कजरवेटिव पक्ष ज्यादा फायदे में रहता है।

चुनाव के दिन रास्ते मे कुछ लडकियो की टोलिया भी अपनी पार्टी के बैज लगाये हमने देखी, पर जलूस या जोश का प्रदर्शन हमने टेलीविजन पर ही चुनाव-परिणाम की घोषणाओ के समय देखा। सचमुच टेलीविजन पर चुनाव-परिणाम देखना-सुनना हमारे लिए नया अनुभव और बडा

आकर्षक था। होटल मे हमने टेलीविजन की खास व्यवस्था करवाई थी और रात के दो बजे तक हम चुनाव-परिणामो की घोषणाएं बड़ी दिलचस्पी से देखते-सुनते रहे। मशीन के इस युग में चुनाव-परिणामो का विश्लेषण भी मशीनो के सहारे किया जा रहा था हमे आश्चर्य हुआ कि ५ परिणामो की घोषणा के बाद ही कजरवेटिव पार्टी की १०५ मतों से विजय का जो अनुमान सुनाया गया, वह बहुत-कुछ सही निकला। टेलीविजन मे बी० बी० सी० भवन (ब्रिटिश ब्राडकास्टिंग हाउस) से चुनाव-परिणामो का विश्लेषण करनेवाले ही नही दिखाई पड रहे थे, बल्कि चुनाव-परिणाम हर-एक मतदाता को प्राप्त मतो के साथ लिखा हुआ भी दीखता था, उसकी घोषणा भी, और बीच-बीच में खास-खास चुनाव-क्षेत्र या विशिष्ट उम्मीदवारो की जीत-हार के दृश्य भी सामने आते थे। ऐसा लगता था, मानो सब-कुछ हमारे सामने हो रहा है और हम सब जगह मौजूद है तथा देख-सुन रहे है। बीच-बीच मे पार्टी-कार्यालयो के दृश्य, जिनमे चुनाव के सबंध में पार्टी-नेताओ से बी० बी० सी० के प्रतिनिधि की मुलाकात और उनकी प्रतिक्रियाए। १० नबर डाउनिंग स्ट्रीट में प्रधान मंत्री के निवास स्थान का दृश्य और प्रधान मत्री की सावधानी-पूर्ण प्रतिक्रिया के साथ सबसे ज्यादा प्रभावित हमे मजदूर नेता गेट्सकेल की प्रतिक्रिया ने किया। उन्होने कहा—"हम मानते हैं कि हम हार गये, लेकिन यह राष्ट्र का निर्णय है और हम इसे स्वीकार करते है।" कितना अनुशासन और कितनी शोभा थी इसमे !

इस तरह अपने देश से छोटे पैमाने पर, छोटे रूप में,

यह सब देखकर जहा 'नाम बडे दर्शन छोटे' वैसी उक्ति याद आई, वहा इस तथ्य की पूर्ण प्रतीति हुई कि आकार या सख्या का उतना महत्व नही, जितना गुण और ठोसपन का है। छोटा होते हुए भी ब्रिटेन ने हम पर इतने दिनो तक शासन किया, क्योकि हम अपने बडप्पन और अपनी महानता के भुलावे मे रहे, जबकि ब्रिटेन के लोगो ने अपने छोटेपन के बावजूद गुणो का विकास कर, चरित्र और अनुशासन द्वारा बुद्धि और शक्ति अर्जित करके हमे जीत लिया। कहते है कि सौ कपूतो से एक सपूत अच्छा, इसी तरह अविकसित और अनुन्नत भारी प्रदेश से छोटा, पर विकसित और उन्नत प्रदेश कही कारगर होता है। ब्रिटेन के छोटे, पर विकसित रूप को देखकर यही भावना हमारे मन में हुई और इस बात से प्रसन्नता भी हुई कि हमारा देश भी आजादी के बाद विकास की योजनाओ द्वारा अपने को विकसित एव समृद्ध करने के लिए प्रयत्नशील है।

: ५ :

सुनियोजित व्यवस्था

उद्योग और व्यापार मे ब्रिटेन ने इतनी उन्नति कैसे कर ली, इसका अदाज हमे कार्डिफ जाने पर लगा, जो दक्षिणी वेल्स में है और मिडलैंड्स या मध्यदेश का प्रवेशद्वार माना जाता है। कार्डिफ एक बंदरगाह है, जहा से दक्षिणी वेल्स का माल वाहर जाता और वहां के उद्योगों में काम आनेवाला कच्चा माल आता है। यहा हमे नई दिल्ली का-सा कुछ आभास हुआ और हमे वताया भी गया कि भूतपूर्व ब्रिटिश प्रधान मत्री लार्ड एटली ने दुनिया के तीन सुदर शहरो में नई दिल्ली के साथ कार्डिफ का भी उल्लेख किया है। लंदन के व्यस्त और कामकाजी वातावरण से यहा हमे कुछ शाति और अपनेपन का अनुभव हुआ।

कार्डिफ का हमारा कार्यक्रम कुछ ऐसा बनाया गया था कि जहा हमे उद्योगो के देखने का मौका मिला, वहा साथ ही वच्चो के क्लव, बूढो के गृह, किसान का जीवन, अवकाश-प्राप्त लोगो की स्थिति देखने और अध्ययन के लिए आये हुए भारतीयों से मिलने का भी सुयोग प्राप्त हुआ। लार्ड मेयर से औपाचारिक मुलाकात भी हुई, जो अपने-आप मे कम आकर्षक नही थी, पर म्युनिसिपल हाल पर भारतीय झडा भी लहराकर हमारे मन को मोह लिया गया। इसी प्रकार

स्थानीय पत्रो के सपादको तथा ट्रेड यूनियन नेता और वाणिज्य सघ के अध्यक्ष से रात्रि-भोजन के साथ और वाद मे भी देर तक विभिन्न समस्याओ पर खुलकर हुई वातचीत ने भी हमे प्रभावित किया।

वातचीत स्वभावतः भारतीय समस्याओ पर हुई। कुछ व्यापार के सबध मे और ज्यादातर चीन द्वारा भारतीय सीमा-अतिक्रमण को लेकर भारत की शातिवादी और तटस्थता की नीति पर। फौजी ताकत से ही दुनिया के झगडो को निपटाने के तरीके को जाननेवालो के लिए सचमुच यह समझ में न आनेवाली वात थी कि चीन के द्वारा सीमा-अतिक्रमण के बावजूद हम शाति से मामला सुलझाने की वात करते हैं और न तो चीन के विरुद्ध कोई फौजी कारंवाई कर रहे है और न ही ऐसे सकट के समय दूसरे राष्ट्रो से फौजी सहायता की माग करते है। फौजी गुटबदियो का हमारा विरोध, वे मानते थे, खुद अपने पर सकट के समय खतम हो जायेगा और हम मानने लगेंगे कि ऐसा करना हमारी गलती थी।

यह मामला हमारी परराष्ट्र नीति से सवध रखनेवाला था और हम यह जानते थे कि हमारे यहा भी एक पक्ष ऐसा ही सोचता है, लेकिन हमारे लिए यह मुखद अनुभव था कि विदेश मे हम सभी अपने देश की परराष्ट्र नीति पर सहमत थे। इससे भी मुखद और आश्चर्यजनक अनुभव यह हुआ कि ट्रेड यूनियन नेता भी हमसे पूरी तरह सहमत थे, वल्कि उन्होंने अपने ढग से हमारे पक्ष का और भी पृष्ठपोषण किया। वहम का सचालन वेल्स स्थित सेंट्रल आफिस ऑव इनफार्मेशन के प्रधान श्री इदरिस इवान्स ने ऐसे अच्छे ढग से किया कि हर

मुद्दे पर सबके विचार सामने आये तथा बड़े प्रेमपूर्ण वातावरण मे मध्यरात्रि को उसकी समाप्ति हुई।

इन बातो ने तो हमें प्रभावित किया ही, कार्डिफ मे हमने 'ट्रिफारेस्ट इडस्ट्रियल इस्टेट' नाम की जिस सुनियोजित औद्योगिक बस्ती का निरीक्षण किया, उससे हम बहुत प्रभावित हुए। हमे बताया गया कि दक्षिणी वेल्स कोयले का घर है, यानी कोयला वहा बहुत है तथा उसके कारण किसी समय वहा बड़ी समृद्धि थी। लेकिन तेल का उपयोग बढने पर कोयले के उद्योग मे नरमी आई और इस क्षेत्र मे बेकारी बढने लगी। एक ओर यह बढ़ती जा रही बेकारी की समस्या थी, दूसरी ओर लदन और उसके आसपास उद्योगो का दबाव बुरी तरह बढ रहा था। आखिर लदन के आसपास के दबाव को कम करने और वेल्स की बेकारी की समस्या मिटाने के लिए यहा एक औद्योगिक बस्ती बसाने की योजना बनाई गई। यही 'ट्रिफारेस्ट इडस्ट्रियल इस्टेट' है।

ट्रिफारेस्ट इडस्ट्रियल इस्टेट मे काफी बड़े भूप्रदेश को विविध उद्योगो के लिए तैयार किया गया और वहा फैक्टरिया या कारखाने शुरू करने के लिए लोग प्रेरित हो, इसके लिए वहां किराये पर शुरू करने के लिए फैक्टरिया बनाई गई। लदन के आसपास पहले स्थापित उद्योग को बढाने या नया उद्योग शुरू करनेवालो को प्रेरित किया गया कि ऐसा वे ट्रिफारेस्ट इडस्ट्रियल इस्टेट मे करे। शुरू मे कारखाने की इमारत या मशीनों पर भारी राशि में रुपया खर्च करने के बजाय किराये की थोड़ी रकम से नया उद्योग शुरू करना उद्योगपतियो के लिए कम सहूलियत नही थी, इस पर यह

सुविधा भी है कि वे चाहे तो बाद मे उस फैक्टरी या कारखाने को खरीद भी सकते हैं। उद्योग से कमाई करके बाद मे कारखाने को भी खरीद लेने की सुविधा स्वभावत. ऐसा आकर्षण है, जिससे उद्योगपतियो को आकृष्ट होना ही चाहिए।

इस व्यवस्था मे कितना खर्च आया होगा, इसका अनुमान इसीसे लगाया जा सकता है कि जमीन सहित पांच कारखानो के निर्माण में ढाई करोड पौंड (१ पौड=लगभग १३ ४०रु०) खर्च आया बताया। निस्सदेह राज्य या नागरिक शासन ही ऐसा काम कर सकता है, क्योकि वह इसके लिए सार्वजनिक ऋण द्वारा भारी राशि सग्रह करके तथा अपने (सरकारी) कोष से भी ऋण-रूप मे रकम लगाकर यह काम करे, तो घाटे मे नही रहता। लगाया गया धन तो किराये से (या कारखाना खरीद लिया जाने पर बिक्री से आई रकम से) वसूल होगा ही, इस तरह उद्योग बढने पर उस पर लगे दूसरे करो से भी आय-वृद्धि ही होगी। लोगो को रोजगार मिलने का जो लाभ होगा, वह अलग। हमें बताया गया कि इस तरह नये उद्योग शुरू करके वहा बेरोजगारी को घटाकर ३ प्रतिशत पर ले आया गया है और अब उसे १ प्रतिशत पर लाने की योजना है।

यहा हमने जिन उद्योगो को देखा, उनमे इडस्ट्रियल जिलेटिन का कारखाना हमें नही भूलेगा, जहा हमें मालूम हुआ कि गाय-भैंस की जो हड्डिया हमारे देश से तथा पाकिस्तान से निर्यात की जाती हैं, उनसे ही जिलेटिन बनता है। हड्डियों को गरम पानी में कुछ रसायनो के साथ धोया और नरम किया जाता है, फिर उन्हे चूना और पाउडर की शक्ल

मिलती है, उनमे से गधक अलग निकलता है और चूरे या पाउडर की शक्ल का जिलेटिन फोटो-प्लेट के, जेली या दूसरी मीठी चीजे बनाने के और दवा भरकर खाने के केपसूल बनाने के काम आता है। इस प्रकार हमे मालूम हुआ कि जिन चीजो से हम नफरत करते हैं, जिन्हे खाना छोड़ छूना भी पाप-सा समझते हैं, उन्हीको औद्योगिक प्रक्रिया से नया रूप धारण करने पर हम खाने तक के काम मे लाने मे सकोच नहीं करते।

क्रीड मशीन के कारखाने मे हमे ऐसी क्रीड मशीन भी मिली, जिसके द्वारा २५ मील के दायरे मे एक जगह का लिखा दूसरी जगह हूबहू उपलब्ध होता है। मुझे लगा, अखबारो के लिए यह उपयोगी है। ससद या किसी समारोह मे महत्व-पूर्ण समाचार के लिए रिपोर्टरो को दफ्तर खबर पहुचाने की जल्दी होती है। वहा तक दौडकर जाये या टेलीफोन करे, इसके बजाय अपने स्थान से ही टाइप करते या लिखते जाये और उधर दफ्तर में वह पहुंचता जाये—जैसे तारघर मे तार आते हैं या अखबारी दफ्तरो मे टेलीप्रिंटर के समाचार—तो क्या सहूलियत नही होगी? भाषा या लिपि की भी इसमे कठिनाई नही हो सकती, क्योकि इस भाषा के टाइपराइटर या हस्तलेख से काम चल सकता है।

मार्गम एबे वर्क्स में हमने जिस स्टील कपनी ऑव वेल्स को देखा, वह तो अपने ढग का इस्पात का बहुत ही बडा कारखाना था। वहा हमने कच्चे लोहे से यत्रो के सहारे भट्टियो से तप कर इस्पात बनते देखा, उसकी पिघलकर निकलती हुई पहले लाल और फिर क्रमश. सफेद लबी शृखला

को देखकर एक अजीब अनुभव हुआ। बडे-बडे क्रेन, इस्पात की चद्दरो का जमा किया जाना और उनसे बननेवाली विविध चीजो का प्रदर्शन तथा दुनिया के विविध भागो को उनके जाने का व्यवस्थित तरीका देखकर प्रभावित हुए बिना नही रहा जा सकता। मेरे लिए तो इस्पात के कारखाने को देखने का यह पहला अनुभव था, लेकिन हमारे जिन साथियो ने भारत मे इस्पात के कारखाने देखे थे, उनके अनुसार भी यह उनसे कही वडा और अधिक क्षमतावाला था। यहा की धमन भट्टी तो, हमे बताया गया, दुनिया के किसी भी इस्पात कारखाने की धमन भट्टी से बडी है। यहा हमे कुछ भारतीय इजीनियर भी मिले, जो दुर्गापुर के इस्पात के कारखाने से या कोलबो योजना के अतर्गत ट्रेनिग के लिए आये हुए थे। उनसे मिलकर ही प्रसन्नता नही हुई, उनका यह अनुभव भी सुखद था कि अग्रेजो का भारत मे जो रुख या व्यवहार रहता है, उससे यहा बिलकुल भिन्न है और ऊचेपन या नीचेपन की भावना यहा नही है।

कोयले की खान भी हमने यही देखी। हवाई जहाज मे ३५-३६ हजार फुट की ऊचाई पर उडे थे, तो कोयले की खान मे हम १६॥ हजार फुट जमीन के अदर गये। यह मेरे लिए बिलकुल नया अनुभव था, लेकिन भय या हिचकिचाहट के बजाय उत्सुकता ही रही। लिफ्ट के सहारे हम जमीन के अदर खान मे गये और फिर पैदल चलकर ठीक उस जगह तक पहुचे, जहा कोयला निकाला जा रहा था और हम लेटकर ही आगे रेग सकते थे। खान में हमने देखा, इतनी नीचाई पर भी रोशनी और हवा का पूरा इंतजाम था। हवा तो ऐसे जोर की आ रही थी कि

बीच-बीच में ठिठुरन होने लगती थी। यन्त्रो के इस युग मे खान के अंदर भी रेलगाडी थी, जिसके डिब्बों मे खोदा गया कोयला डालकर उसे लिफ्ट से ऊपर लाने के स्थान तक पहुचाया जाता है। अंदर काम कर रहे लोगो मे कोयले की तह को विस्फोट से ढीला करनेवालो को हमने नगे बदन काम करते हुए भी देखा, जिसका अर्थ है कि काम इतनी मेहनत का होगा, जिससे ठडक मे भी गरमी आ जाती है। लिफ्ट के सहारे ऊपर आकर जब हमने मुह-हाथ धोकर कपड़े बदल लिये, तो फिर यह याद रहने भर की बात हो गई कि हम १६।। हजार फुट धरती के अदर भी गये थे।

हाउसिंग इस्टेट या सरकार अथवा नगर कौसिल की तरफ से रहने के मकान बनाकर लोगो को वाजिब दाम पर स्वास्थ्यप्रद मकानो मे रहने की प्रेरणा करने की योजना भी हमने वहा पर देखी। उसके विस्तार और खर्च के विवरण में न जाकर हम यही कह सकते हैं कि मकान व्यवस्थित, हवा व रोशनी की सुविधा के साथ आरामदेह और सम्मानपूर्वक रहने योग्य थे। अकेले आदमियो के रहने के, पति-पत्नी के रहने के, बडे परिवार के लिए, इस तरह अलग-अलग तरह के मकानों का सिलसिला था। आसपास के स्थान को भी व्यवस्थित किया हुआ था। बाजार, स्कूल आदि का भी आयोजन था। इसके अलावा निजी तौर पर बनाने के लिए स्वीकृत करने की जगह और व्यवस्था भी थी। मकान जिस सामान के बनाये जा रहे थे, वह तो अच्छा था ही, उन पर लागत भी जो बताई गई, वह ज्यादा नही मालूम हुई। जो लोग रह रहे थे, उनमें से जिनसे मिले, उन्हे भी हमने खुश ही पाया। लोगों के रहन-सहन

का स्तर तो निस्सदेह ऊचा है ही, पारिश्रमिक भी ज्यादा ही है। इस्पात कारखाने मे पूछने पर बताया गया कि राष्ट्रीय न्यूनतम वेतन तो वहा ८ पौंड प्रति सप्ताह है, पर पडता इससे ज्यादा ही है, यानी महीने मे ३२ पौड या चार सौ रुपये से अधिक। यह स्थिति निस्सदेह सुनियोजित व्यवस्था का ही परिणाम है।

: ६ :

जमीन और जानवरों का उपयोग

उपयोगितावाद के बारे मे हमने पढा तो था, पर असली रूप में वह हमे इग्लैड मे ही दिखाई पड़ा। मनुष्य ने जब प्रकृति को विजय कर लिया, तो हरएक बात मे उसकी दृष्टि अपने लिए उपयोगिता की हो गई। हमारे देश मे लोग अब भी पृथ्वी, पहाड, नदियो और पेडो की पूजा करते है। इसी तरह लोग गौ को माता और वृषभ को देवता मानकर पूजते हैं। यही नही, बल्कि साप को भी देवता मानकर नागपचमी के दिन दूध पिलाकर सर्प-पूजा करते है। इग्लैड मे चर्च के रूप मे धर्म को महत्व देते हुए भी हमने इससे उलटा पाया। इन्हे पूजने के बजाय मनुष्य के लिए हर चीज का अधिक-से-अधिक उपयोग करने की प्रवृति वहा हमने पाई।

धरती की पूजा के बजाय, हमने वहा देखा, रहने, याता-यात, कृषि और कारखानो के लिए उसका अधिकाधिक उप-योग किया गया है। भू-प्रदेश छोटा और समृद्धि अधिक होने के कारण रिहायशी मकान और दफ्तर कई-कई मजिले है, जिन्हें गगनचुबी कहा जा सकता है। यही नही, बल्कि धरती के नीचे भी मजिले हैं। यातायात के लिए जमीन के ऊपर सडके और रेल की लाइने है, आकाश मे हवाई जहाज उडते है और धरती के नीचे भूगर्भ रेलवे। उपज का जहातक सबध है,

यत्रो और रसायनो के प्रयोग द्वारा पृथ्वी का अधिक-से-अधिक उत्खनन करके अधिकतम कृषि-पदार्थ (फसल) प्राप्त करने की होड है। नदियो की पूजा करने के बजाय उन्हें नौका-वाणिज्य और नौका-विहार का साधन बनाया गया है। उनके किनारे क्लब और सैरगाह है, उनमे मछलिया पकड़ने का आकर्षण है और हस व बत्तख भी यहा-वहा आपको मिलेगे। पहाडो और पेडो का भी उपयोग है, व्यर्थ कोई भी चीज नही है।

इसी तरह यत्रो के इस युग मे गाय और बैल की भी पूजा नही होती। गायो का पालन और सवर्धन किया जाता है, इसलिए कि गायो से दूध प्राप्त कर उसे पीने के काम मे लाया जाये और दूध का मक्खन व पनीर बनाकर उससे स्वाद और पोषण प्राप्त हो। बैल के बिना न गाय गर्भ धारण कर सकती है, न बैलो की अच्छी तरह सारसभाल रखे बगैर गायो से अच्छी किस्म के बछिया-बछडे प्राप्त किये जा सकते है, इसलिए गाय के साथ-साथ बैल का सुचारु सवर्धन भी आवश्यक है—फिर चाहे उपयोगिता की दृष्टि से देखिये, या दूध की दृष्टि से, या अच्छी नस्ल के खयाल से। जो गाय-बैल हलके दरजे के हों, उन्हे गोश्त के लिए तैयार किया जाता है। गोश्त के लिए हम इसलिए कहते है कि यो तो सभी गाय-बैलो का, बल्कि घोडो तक का गोश्त वहा खाया जाता है, लेकिन जिन गाय-बैलों को गोश्त के लिए तैयार करना हो, उन्हे खिला-खिलाकर मोटा-तगडा करते है, जिससे उनसे ज्यादा और अच्छा मास मिले।

कार्डिफ से एक दिन हम किसानो का जीवन देखने

एक खेत पर गये। यों रेल से तथा मोटर में जाते हुए खेत हमें दिखाई दिये थे, गौए और भेड़े भी हमने किन्ही खेतो मे इकट्ठी देखी थी, लेकिन खेत मे जाकर देखने और किसान परिवार से मिलने का वह पहला मौका था। खेत तक पहुचने के लिए पक्की सड़के थी, हमारी मोटर खेत की हद मे ठीक किसान परिवार के घर तक पहुची और प्रसन्न-वदन किसान-दंपती ने हाथ मिलाकर हमारा स्वागत किया। हम उनके घर मे गये और वहां उनके छोटे भाई और छोटे भाई की पत्नी भी बातचीत मे शामिल हो गये। पहले तो हमारा चाय-काफी और बिस्कुट-पेस्टरी से सत्कार हुआ। फिर थोड़ी देर बैठक मे ही बातचीत चलती रही। इसके बाद सबके साथ हम उनका खेत देखने गये।

हमे बताया गया कि यह दो भाइयो की सयुक्त खेती थी। खेत पर बने मकान मे दोनो भाई रहते थे। उस दोमजिले मकान मे हमे नही लगा कि हम शहर से दूर कही खेत पर हैं। आधुनिक सभी सुविधाओ से वह युक्त था—रसोई मे गैस से खाना पकाने की व्यवस्था थी, बाथरूम आधुनिकतम कमोड व बाथ-टब से युक्त था, ड्राइग रूम मे बढिया सोफा और मेज आदि, सारे मकान मे कार्पेट, यहातक कि जीने मे भी कार्पेट था, सजावट की चीजो, फोटो, चित्रो के अलावा टेलीविजन भी वहा मौजूद था।

किसान दपतियों को ऐसे मुक्त रूप मे देखने का मेरे लिए यह पहला अवसर था। किसान परिवारो मे यो मैं अपने देश मे भी गया हू। बचपन मे गाव मे रहते समय, बच्चे के रूप मे, किसानो के परिवारो में जाना-आना हुआ

था, तब स्त्रियो को भी मुक्त रूप मे देखने के अवसर मिले थे। बडे होने पर तो उनके परिवारो मे परदा न होते हुए भी सकोच की बाढ रही, लेकिन बचपन में सकोच की बाढ न होने पर भी वह मुक्तता मुझे नही मिली, जो इग्लैड के इस किसान परिवार में सामने आई। बड़े दंपती कुछ अधेड़ थे, तो छोटे सर्वथा युवा। बातचीत से हमे पता चला कि छोटे भाई की पत्नी दो साल यूनिवर्सिटी मे भी पढ चुकी थी, सेंट्रल आफिस ऑव इनफार्मेशन के जो श्री ग्रीडी हमारे साथ थे, उनकी वह यूनिवर्सिटी में सहपाठिन थी और लंदन मे बैंक मे नौकरी भी कर चुकी थी। किसान युवक से विवाह करने के लिए उसने नौकरी और लदन का शहरी जीवन छोडकर इस खेत (फार्म) को अपना घर बनाया था।

हमारे यहा की कोई इतनी अधिक पढी-लिखी और शहरी लड़की किसी किसान से ब्याह कर खेत पर जाना पसद करेगी, इसकी कल्पना ही व्यर्थ है। लेकिन यही तो स्थिति का अतर है। यहा भी खेती व गाव की वही स्थिति हो, तो भी पढी-लिखी और शहरी स्त्रिया खेत और किसान परिवारो की ओर आकृष्ट नही होगी, ऐसा नही कह सकते।

खेत के जीवन मे शहरी चमक-दमक और विलासिता चाहे न हो, पर घनी आबादी का शोर-गुल और पराधीन व्यस्तता से मुक्ति के साथ जीवन की सामान्य सुविधाओ का वहा अभाव नही मालूम हुआ। यत्रो के प्रयोग से शारीरिक श्रम भी सभवतः उतना अधिक नही, फिर हो भी, तो पुरुष-स्त्रियो के बीच काम का बटवारा इस तरह हो जाता

होगा कि शरीरश्रम के काम पुरुष और हलके काम स्त्रियां ही करे।

किसान दंपतियो द्वारा अपने खेत, अपने पशु, उन्हें रखने की व्यवस्था आदि दिखाई जाते वक्त जानकारी के लिए हमारे एक साथी ने पूछा—"गायो की दूध दूहने की मशीन अगर खराब हो जाये, तो आप दूध दूहना जानती है ?" छोटे भाई की युवती पत्नी ने हसकर कहा—"जी, नही।" हमारे साथी ने पूछा—"उस हालत मे गाय कौन दुहेगा ?" उसने अपने पति की ओर शरारतभरी नजर डालते हुए व्यंग्य मे कहा—"ये पुरुष किसलिए हैं !" हमे मजा आया, पर साथ ही उस जिज्ञासा का उत्तर भी मिल गया, जो इग्लैड मे स्त्रियो को बडे पदो पर, या मेहनत के कामो पर न देखकर कई बार मन मे उठी थी।

स्त्री-पुरुष की समानता की बात आधुनिक रूप मे हमने इग्लैड से ही ग्रहण की है, लेकिन यहां बड़े पदो पर अपवाद-रूप ही स्त्रियां मिलेगी। बड़े-बड़े कारखानो मे मशीनों से अपने-आप काम होना बढ जाने पर भी जिम्मेदारी के और भारी कामो पर हमे स्त्रिया नही मिली। कोयले की खान मे भी पुरुष ही काम करते मिले।

तेल साफ करने के कारखानो मे भी, विद्युत शक्ति के द्वारा सचालन के बावजूद, खतरे के कार्यों पर स्त्रिया नही दिखाई दी। यही नही, आम चुनाव के दिनों मे अखबारों में यह शिकायत भी पढ़ने को मिली कि जनसंख्या मे स्त्रियों के अनुपात से पार्लमेंट मे स्त्री-सदस्यो की सख्या नगण्य है। यो स्त्रिया वहा अधिकाश काम करती हैं। तरुणाई की वय

प्राप्त होते ही, सभवत १६ और २० वर्ष की आयु के बीच, पुरुषो की तरह स्त्रियो मे भी खुद कमाने और अपना रास्ता निकालने की प्रवृत्ति वहा नजर आती है।

युवावस्था के बाद भविष्य-निर्माण का दायित्व माता-पिता के बजाय स्वय पर आ जाता है, वर भी स्वय ही ढूढना पडता है, शायद यह भी इसका कारण हो। लेकिन ऐसी आयु से जीवन-निर्वाह के क्षेत्र मे पड़ने पर रिसेपशनिस्ट, विक्रेता (सेल्सगर्ल या शाप असिस्टेंट), टाइपिस्ट, क्लर्क और सेक्रेटरी के काम ही ज्यादातर उनके हिस्से मे आते हैं—शायद शारीरिक क्षमता जनित उपयोगिता की दृष्टि ही यहा काम कर रही हो।

जहातक खेती का सबध है, उस खेत या फार्म में हमें हमारे यहा की तरह किसी फसल के खेत मात्र नही मिले, बल्कि यत्रो से जोते गये खेतो मे अन्न, सब्जियां, तिलहन व घास की खेती के साथ-साथ वहा गायो के रखने की व चरने की जगह, भेडो के रहने व चरने के स्थान, सूअरों के रखने की व्यवस्था तथा बैलो को नस्ल या गोश्त के लिए तैयार करने की गुजाइश भी थी। दूध को दूहने के बाद दुग्धशाला भेजने के लिए मोटर-वान और फसल को रखने के गोदाम के अलावा एक छोटा पुष्पोद्यान भी वहा था। एक मोटर शायद किसान दपतियो के निजी उपयोग के लिए वहा मौजूद थी।

मुर्गीखाना खेत का आवश्यक अग था। इस तरह वह सयुक्त खेती ही नही थी, सम्मिश्रित कृषि भी उसे कह सकते हैं, क्योकि एक की अपूर्णता को दूसरी चीज से पूरी

करने की व्यवस्था थी । फार्म के विविध भागो मे घुमाकर हमें बताया गया कि खेती की उपज का ही लाभ नही उठाया जाता, बल्कि सूअरो की चरबी व गोश्त बेचकर, मुर्गे-मुर्गिया तथा उनके अडे बेचकर, गाय का दूध और गाय-बैल का गोश्त बेचकर, इसी तरह भेड़ों का ऊन और गोश्त के लिए स्वय उन्हे बेचकर भी, कमाई की जाती है। यो घाटे की गुजाइश नही रहती ।

गाये हमने जो वहा देखी, वे हमारी गायो से भिन्न मालूम पडी । लबी कम, मोटी ज्यादा, चितकबरी अधिक दीखी । उन्हे रखने को सीमेट की पक्की जगह थी, पाखाने-पेशाब की सफाई की व्यवस्था, उन्हे नहलाने व चराई का अच्छा इतजाम, घास के अलावा खिलाई जानेवाली चीजो का भी सग्रह; दूध के लिए थन मे लगाकर दूहनेवाली मशीन और साफ किये बर्तन, जिनमें छनकर दूध भरा जाता है। दूहते या बर्तन मे भरते समय दूध या गाय के थन को आदमी का हाथ भी नही लगता ।

हमे बताया गया कि ४० पौड यानी लगभग २० सेर तक दूध प्रत्येक गाय से प्राप्त होता है। दूध शुद्ध व अच्छा मिलता है, मिलावट नही होती, यह तो ठीक , पर उपयोगिता के आगे मानव दया-माया की भावना को छोड देना कहातक ठीक है, यह बात अब भी दिमाग मे बैठ नही पाई है । तर्क निस्स-देह उपयोगितावाद के साथ है, यह तथ्य भी निर्विवाद है कि गौ को माता और बैल को देवता माननेवाले हम लोगो के देश मे गाय-बैल का पालन-पोषण अपेक्षाकृत निकम्मे और हृदयहीन ढग से हो रहा है, साथ ही इस बात से भी इनकार

नही किया जा सकता कि दूध और मक्खन जितना अच्छा और (वहा की महगाई को देखते हुए) सस्ता वहा मिलता है, उतना हमारे देश मे नही, फिर भी पुराने सस्कारो में जकड़ा हुआ मन यह मानने को तैयार नही होता कि जमीन और पशुओ तक पर उपयोगितावाद का प्रयोग किया जाये। यो तो फिर यह क्रम बढते हुए क्या मनुष्यो पर भी लागू नही होगा ? और इग्लैड में, हमे लगा, ऐसा कुछ प्रयोग शुरू तो नही हो गया है !

: ७ :

बूढ़ों और बच्चों के बीच

बच्चे नये युग के सदेशवाहक होते हैं, जबकि बूढे बीत रहे जमाने की परछाई। इसीलिए बच्चो के बीच हर्ष किलकारिया मारता और उनका सान्निध्य नवजीवन प्रदान करता है, जबकि बूढो के बीच एक घुटन-सी होती है और मनुष्य की अवशता सामने देख करुणा पैदा होती है। गौतम बुद्ध की कथा मे हमने पढा कि उन्हे बाल्यकाल मे इसीलिए वृद्ध और रोगियो, दुखियो और दीनो से दूर रखने का भरपूर प्रयास किया गया कि इन्हे देखकर उनके मन मे हारी-हारी भावना पैदा न हो। हुआ भी यही कि जब उन्होने दुखियो को देखा, वृद्ध को देखा, रोग से मरे हुए को देखा और लडाई मे मरतो को देखा, तो उनके मन में जिज्ञासा पैदा हुई कि आखिर एक दिन हर-एक का यही हश्र तो नही होना है ? इस जिज्ञासा ने ही उन्हे जीवन के प्रति अनासक्त और विरक्त बनाकर बुद्ध महान बनाया।

कुछ इसी तरह के विचार हमारे मन मे उस समय उठे, जब कार्डिफ से एक दिन हम 'वृद्ध-गृह' या 'बूढो के आश्रम' मे गये। मकान निस्सदेह बड़ा सुदर था, किसीका भव्य प्रासाद किसी समय रहा होगा। बगीचा उसमे था, कमरे बढ़िया थे और बूढे पुरुषों तथा वृद्ध स्त्रियो के लिए बिस्तरे, मेज-

कुरसी, कमोड, बाथ—सभी का इतजाम था। बूढो के लिए समय पर चाय, भोजन आदि की भी समुचित व्यवस्था थी। यह देख पहली भावना मन मे यही पैदा हुई कि इग्लैड के बूढे बडे भाग्यवान हैं, जो बुढापे की पेशन के साथ-साथ उनके रहने-खाने आदि की भी ऐसी बढिया व्यवस्था है! इडस्ट्रि-यल हाउसिग स्कीम मे अवकाश प्राप्त वृद्ध और वृद्धा का जीवन भी हम देख ही चुके थे, वह भी कम आरामदेह नही था।

बूढे व्यक्तियो से हमने वार्त्तालाप भी किया, उनके साथ फोटो खिचा और वहा का चाय-पान भी हमने किया। ९५ और १०० वर्ष के बीच की आयुवाले स्त्री-पुरुषों के बीच हमे अपनी लघुता का भान हुआ, एक जगह इतने दीर्घायु प्राप्त स्त्री-पुरुषो को देखकर इग्लैड मे लोगो का स्वास्थ्य हमारे देश से अच्छा रहने की प्रतीति हुई। यह भी स्पष्ट हो गया कि लोगो के जिदा रहने की आयु निस्सदेह वहा हमारे देश से अधिक होनी चाहिए।

लेकिन बूढो की बातचीत मे, सिवा उनके कुछ पुराने सस्मरणो के, उत्साहवर्द्धक कुछ नही था, वल्कि सारा वाता-वरण अकेलेपन और अवशता का हृदयद्रावक दृश्य था। हमे आश्चर्य हुआ 'आश्रम' का इतजाम करनेवाले व्यक्तियो पर, जिनमे हमारा स्वागत करनेवाले स्त्री और पुरुष दोनो ही शामिल थे, और जो वृद्ध न होकर अपेक्षाकृत जवान थे। यह जानकर हमें खुशी भी हुई कि भद्र समाज की ऐसी महिलाए और पुरुष, जिनके पास समय होता है, वहा स्वेच्छा से ऐसे कामो के लिए अपनी सेवाए अर्पित करते हैं।

बूढों के बीच जाने का एक अवसर हमे मैंचेस्टर मे भी आया, जब हम सुप्रसिद्ध 'मरसाई टनेल' को पारकर लिवर-पूल के समुद्रतट पर घूम रहे थे। 'मरसाई टनेल' इजीनियरिंग का एक चमत्कार है। मरसाई नदी जहां समुद्र मे मिलती है, उसके नीचे कई मील लबी सुरग बनाकर समुद्र के इस किनारे को दूसरे किनारे तक मोटर-यातायात के लिए सुलभ कर दिया गया है—मोटर भी एक नही, ४-५ साथ-साथ चल सकती है।

इसी 'टनेल' को मोटर से पार करके जब हम लिवरपूल के समुद्रतट पर घूमने लगे, तो वहां धूप सेकते बहुतेरे बूढों पर हमारी नजर पड़ी। पूछताछ और बातचीत से हमने पास ही बूढो के क्लब का भी पता लगा लिया और उसे जाकर देखा भी। वहा भी कम-से-कम मेरे मन मे यही छाप पड़ी कि मनोरजन और समय काटने की व्यवस्था के बावजूद बूढो के मन मे सूनापन है और है अपनो की चाह।

अपनो की चाह कैसे भी सुख और इतजाम के बावजूद मनुष्य की जन्मजात स्वाभाविक इच्छा है। बचपन से ही मनुष्य घर मे रहता और छोटे-बडो का सान्निध्य व प्रेम प्राप्त करता है। युवावस्था के दापत्य-प्रेम को छोडकर वयः-वृद्धि के साथ-साथ लोगो मे बराबरीवालो के अलावा बच्चो के सान्निध्य की तीव्र भावना होती है—खासकर बूढे, जिनके साथ जवान बराबरी के साथ पेश नही आ सकते और जिनकी बातो मे जवानों को रस नही आता, बच्चो के लिए तरसते है, जिन्हे वे कहानिया सुना-सुनाकर तथा रगीन अतीत की बातों से चकित करके रिझाते हैं और जिनके मुक्त हास्य और

व्यवहार से वे नवजीवन पाने की कोशिश करते है। इन वृद्ध-आश्रमो और क्लबो में उनकी सुख-सुविधा का चाहे जितना प्रबध हो; अपनो का, और खासकर घर के बच्चो का, बिछोह खले बिना नही रहता होगा। यही वजह है कि आनद के बजाय उदासी की छाया ही वहा हमे मिली और मन मे उस सामाजिक व्यवस्था पर क्षोभ हुआ, जिसमें अपने मा-बाप तक को साथ रखना लोग पसद नही करते।

इसके विरुद्ध बच्चो के क्लब ने हमे आह्लादित किया। कार्डिफ मे बच्चो का जो क्लब हमने देखा, वह अतर्राष्ट्रीय क्लब था, यानी विभिन्न राष्ट्रीयतावाले बालक वहा मनोरजन के साथ-साथ स्वास्थ्य एव शिक्षा प्राप्त करते थे। इसमे बच्चो के लिए विभिन्न शारीरिक खेलो द्वारा स्वास्थ्य बनाने की व्यवस्था थी, मनोरजन के साथ-साथ ज्ञानार्जन की दृष्टि से बढई, पेंटिंग, चित्रकारी आदि के काम थे और कठपुतलियो के तमाशे की व्यवस्था थी।

जिस दिन सायकाल हम लोग वहा गये, तो सयोग की बात, भारतीय बच्चे सभी सिनेमा गये हुए थे। खोज करने पर पेशावर की एक बुढिया अपने बच्चो के साथ मिली, जिसने बडे प्रेम से हाथ मिलाया और एक-एक कर अपने बच्चो का हमे परिचय दिया। उसके आज़म और (लडकी का नाम याद नही रहा) दूसरे बच्चे हमे भारतीय बच्चो से भिन्न नही लगे और बुढिया ने भी अपने व्यवहार से यह नही भासित होने दिया कि वह हमारे देश की नही है। बादशाह खान और डाक्टर खानसाहब की चर्चा ने तो मानो उसकी भावनाओ को खुला छोड दिया। हमें आश्चर्य हुआ कि एक दिन रास्ते

मे अचानक मिलने पर भी उसने हमे पहचान लिया और उसी प्रेम के साथ आगे होकर हमसे मिली।

इस क्लब मे हमने बच्चो को तरह-तरह के खेल खेलते देखा। अपनी-अपनी रुचि और आयु के अनुसार पेंटिंग, लकड़ी की कटाई, रिंदाई आदि काम करते हुए भी विभिन्न कमरो मे हमने उन्हे देखा। एक कमरे मे कठपुतली के खेल का इतजाम था, जिसे अदर बैठकर एक लडके और एक लडकी ने हमे दिखाया। कठपुतली के तमाशे हमने अपने देश मे भी देखे है, जयपुरी लोग खाट खडी करके अकसर ये तमाशे दिखाते हैं, लेकिन वहा कमरे मे ही ऐसी व्यवस्था थी कि खाटों की जरूरत नही पडी और खेल मजे मे चलता रहा। खेल हमारे साथ बच्चे भी देख रहे थे, जिन्हे उनके व्यवस्थापक हमसे पीछे और शात रखे हुए थे।

बच्चो के क्लब की तरह ही बच्चो के प्राइमरी स्कूल ने भी हमे आकर्षित किया, जिसे हमने कार्डिफ और मैंचेस्टर के प्रवास के बाद लदन आने पर पुटनी मे देखा। केंब्रिज हम जब गये, वहा उस दिन छुट्टी थी, इसलिए विश्वविद्यालय को सक्रिय रूप मे हम नही देख पाये, पर पुटनी के प्राइमरी स्कूल मे हम गये, तब छुट्टी नही थी, इसलिए छोटे बच्चो की पढाई सक्रिय रूप मे हमने देखी। सभवतः वह नमूने का प्राइमरी स्कूल था। जो भी हो, उसकी पढाई के ढग ने हमे आकर्षित किया। शायद बच्चों को हमारे आने की पहले से खबर मिल गई थी, इसलिए वे हमारी प्रतीक्षा ही कर रहे थे। मोटर से जब चार मेहमानो के बजाय हम दो ही उतरे (दो अन्यत्र चले गये थे), तो जिज्ञासाशील बच्चो का यह प्रश्न स्वाभाविक था—

"सिर्फ दो?"

साफ-सुथरे सुदर और व्यवस्थित बच्चो के बीच अपने को पाकर हम मे मानो नवजीवन आ गया। स्कूल की हैडमिस्ट्रेस ने हमारा स्वागत किया और अपने कमरे मे बिठाकर बातचीत की तथा विभिन्न कमरो मे ले जाकर पढाई दिखाई। १०-१२ बरस के कुछ बच्चो से हमने किताब पढवाकर सुनी, अर्थ और कथा के सिलसिले पूछे, उनकी कापिया देखी। दो लडकियो के बीच एक लडका पहले पूछे जाने की उत्कठा में हमारा ध्यान आकर्षित कर रहा था, उम्र के हिसाब से मोटा और मस्त होने से भी वह आकर्षक था। उसकी कापी देखकर हमारे पत्रकार मित्र ने कहा—"अच्छा मार्टिन, यह बताओ, तुम अगर अपनी मा को पत्र लिखो, तो उसको पढने के लिए क्या उसे तुमको नही बुलवाना पडेगा ?"

इस पर स्वभावतः अपनी अस्पप्ट लिखावट का उसे भान हुए बिना न रहा। हैडमिस्ट्रेस ने भी कहा—"मार्टिन, यह मेहमान क्या कहते हैं ?" मार्टिन ने वह बात दोहरा दी और भविष्य मे लिखावट सुधारने का प्रयत्न करने की बात मान ली।

क्लासो मे हमने देखा, खेल-खेल मे सिखाने की व्यवस्था थी। मोटे अक्षरो मे लिखे चार्ट, रग भरने की व्यवस्था और किताबें आदि सभी-कुछ वहा था। क्लास मे बहुत विद्यार्थी न होते हुए भी ७-७, ८-८ बच्चो के ग्रुप बने हुए थे। हरएक की प्रतिभा को विकसित करने का इतजाम था। बीच मे दूध, नाश्ते और (दूर रहनेवाले बच्चो के लिए) खाने की व्यवस्था

तो थी ही, सबसे ज्यादा आकर्षित हमे उनकी व्यायाम-व्यवस्था ने किया। एक कमरा व्यायाम या खेल-कूद के लिए था। जब हम स्कूल मे थे, व्यायाम का वक्त हो गया। हमने वहा जाकर देखा, रेडियो पर बी० बी० सी० से खेलकूद का कार्यक्रम प्रसारित हो रहा था और उसके अनुसार खेल-अध्यापिका बच्चो से अभ्यास करा रही थी। सीधे-बाये, ऊचे-नीचे, बैठने-उठने-मुड़ने के आदेश पर कवायद हुई। साथ ही सगीत की धुन का ज्ञान भी कराया गया। सगीत की अमुक धुन के साथ इस तरह हाथ मटकाओ, इस तरह पैर थिरकाओ, इस तरह सिर घुमाओ—यह सब निर्देश के साथ-साथ, अध्यापिका द्वारा खुद के अमल से बच्चो से कराने का दृश्य आकर्षक और ज्ञानवर्द्धक था। इसी तरह नाच के तान-लय भी सिखाये गये। कहते है, हर रोज ठीक वक्त पर बी० बी० सी० से कार्यक्रम प्रसारित होता है और स्कूलो मे इसी तरह उसको अमली रूप मिलता है। यह क्रम निस्सदेह अनुकरणीय है।

इग्लैड मे बच्चे हमे अन्यत्र भी मिले। उनमे खेल की प्रवृत्ति, जानने की उत्सुकता और उल्लास के प्रदर्शन की अदम्य भावना वैसी ही थी, जैसी हमारे देश मे। एक मतदान-क्षेत्र के पास, जो सभवतः गरीबो की बस्ती थी, हमने मैले कपडो मे धूल मे खेलते बच्चे भी देखे, तो अन्यत्र साफ-सुथरे गुड्डे-गुडिया-से बच्चे भी मिले। फर्क सिर्फ यह मिला कि वहा उन्हे शुरू से ही विकसित और अनुशासित करने की प्रवृत्ति है, जबकि हमारे यहा कोई सुनियोजित व्यवस्था नही है। बच्चे धरती के फूल हैं, इसलिए आकर्षक और आह्लाद-कारक तो सभी जगह वे हैं। उन्हे देखकर और उनमे हिल-

: ८ :

शेक्सपियर की जन्मभूमि में

ब्रिटेन की औद्योगिक प्रगति से परिचय प्राप्त करते हुए बीच-बीच मे हमे वहा के सामाजिक जीवन को देखने और साहित्यिक तीर्थ-यात्रा करने के अवसर भी प्राप्त हुए। सबसे पहले हमने लंदन मे अग्रेजी के प्रथम कोषकार डाक्टर जानसन के घर की तीर्थ-यात्रा की। उनके घर को एक ट्रस्ट की व्यवस्था में सुरक्षित किया हुआ है। घर मे उनके रहने के समय के फर्नीचर, उनके चित्र और उनके ग्रथो तथा पाडुलिपियों का सुव्यवस्थित प्रदर्शन है।

एक महिला गाइड हर आगतुक को डाक्टर जानसन तथा उनके साहित्य के सबध में जानकारी देती है। जब अधिक दर्शक एकत्र हो जाते हैं, तो एक भाषण का-सा समा बध जाता है। इसके बाद दर्शक विभिन्न कमरो का चक्कर लगाते और डाक्टर जानसन से सबधित चित्रो तथा अन्य वस्तुओं का अवलोकन करते हैं। अपनी-अपनी रुचि और अवकाश के अनुसार हर दर्शक वहा कम या अधिक समय खर्च करता है, पर प्रवेश-टिकट की राशि सबको उतनी ही देनी पडती है। मकान के पास, फ्लीट स्ट्रीट से मकान को जानेवाली गली मे, एक मकान के तहखाने-से कमरे मे भी हम गये, जहा तरह-तरह की शराब और बिजली की रोशनी

थी। अगर मुझे गलत याद नही रहा, तो हमे बताया गया कि यहा डाक्टर जानसन अपने समय के प्रसिद्ध साहित्यकारों के साथ बैठकर गप-शप और खान-पान करते थे। यह भी बताया गया कि पत्रकार और साहित्यिक अब भी शातिपूर्ण भोजन की पार्टियो के लिए इसका उपयोग करते हैं।

डाक्टर जानसन की स्मृति-रक्षा की व्यवस्था देखकर मन प्रभावित हुए बिना नही रहा। लेकिन अग्रेजी के विश्व-विख्यात साहित्यकार शेक्सपियर की स्मृति-रक्षा की जैसी व्यवस्था की गई है, उसे देखकर तो दग रह जाना पडता है। कार्डिफ से जब हम इस महान साहित्यकार की जन्मभूमि (स्ट्रेटफर्ड-अपॉन-एवन) गये, तो मन प्रफुल्लित हो गया। सारे नगर को शेक्सपियर-मय बना दिया गया है और शेक्सपियर की स्मृतियो को ऐसा सुरक्षित किया गया है कि देखते ही बनता है।

एवन नदी का तटवर्ती होने से स्ट्रेटफर्ड-अपॉन-एवन ही नगर का नाम हो गया है। नगर तो बहुत पुराना बताते है, प्रागैतिहासिक पुरुषो के यहा होने तथा एक समय रोमन-ब्रिटिश गाव रहने और बाद मे एग्लो-सेक्सनो की बस्ती बन जाने के प्रमाण भी यहा मिलते है, लेकिन इसकी ख्याति स्थानीय हस्तकौशल और पशु-विक्रय तथा अन्य क्रय-विक्रय के केंद्रीय बाजार के रूप मे रही है। अब शेक्सपियर की जन्म-भूमि के रूप मे इसे अतर्राष्ट्रीय यात्रियो का केंद्र बना लेने पर भी केंद्रीय बाजार की इसकी ख्याति कम नही हुई है, बल्कि एवन नदी पर बहुत पहले बने लकड़ी के पुल को पद्रहवी सदी के अत मे जब लदन के लार्ड मेयर बने स्थानीय निवासी ह्य

क्लाप्टन ने पत्थर का बनवाकर नगर की भावी समृद्धि की नींव डाल दी और अठारहवी सदी मे एवन नदी को जल-याता-यात के लिए विकसित कर लिया गया, तो इसकी महत्ता और समृद्धि बढ गई। पिछले डेढ सौ वर्षो मे तो मेलो व बाजार का यह छोटा नगर अतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त कर चुका है तथा यातायात के साधनों की प्रगति और मनोरजन के साधन उपलब्ध करके आज यह यात्रियो एव छुट्टी का उपभोग करने-वालो का बहुत प्रमुख केंद्र बन गया है।

शेक्सपियर के सबध मे पिछले दिनो हमने एक विवाद की चर्चा पढी थी, जिसमे शेक्सपियर के अस्तित्व पर शका की गई थी। कुछ इस तरह का विवाद था कि शेक्सपियर के नाम से जो कुछ प्रकाशित हुआ, वह क्रिस्टोफर मार्लो का लिखा हुआ था, शेक्सपियर नाम कल्पित था। लेकिन शेक्स-पियर की जन्मभूमि मे हमने शेक्सपियर का जन्म-स्थान, उनकी पत्नी (एनी हैथवे) का मकान, बाद मे शेक्सपियर जहा रहे और मरे, वह मकान (न्यू प्लेस) तथा उनकी लडकी सुसन्नी का मकान (हाल्स क्राफ्ट, जिसमे वह अपने पति डाक्टर जान हाल के साथ रहती थी) ही नही देखे, बल्कि जिस गिरजाघर मे शेक्सपियर का बप्तिस्मा हुआ, जिस ग्रामर स्कूल मे वह बाल्यकाल मे पढे तथा जहा वह दफनाये गये, उन्हे भी देखा। वह सब देखकर ऐसा नही लगा कि शेक्सपियर कोई कल्पित व्यक्तित्व था। चर्च के रजिस्टरों में उनके बप्तिस्मे और दफनाये जाने का ही उल्लेख नही है, बल्कि शेक्सपियर की मूर्ति भी वहा है और कब्र पर अग्रेजी मे निम्न पंक्तिया लिखी हुई हैं :

Good friend for Jesus' sake forbear,
To dig the dust enclosed here,
Bless be ye man y' spares these stones
And curst be he y' moves my bones.

—भले मित्र, ईश्वर के लिए इस स्थान की मिट्टी को न छेडो। वह धन्य है जो इस स्मारक की रक्षा करेगा, और जो मेरी अस्थियो को हटायेगा, उसे अभिशाप लगेगा।

यहां जो कुछ देखा तथा जो परिचयात्मक साहित्य प्राप्त किया, उसके अनुसार, विलियम शेक्सपियर का जन्म सन १५६४ ईसवी की २३ अप्रैल को हुआ था और मृत्यु सन १६१६ की २३ अप्रैल को हुई। इस प्रकार ५२ वर्ष की आयु उन्होने प्राप्त की और यह सयोग की बात है कि जन्म-मरण दोनो एवन नदी तटवर्ती स्ट्रेटफर्ड मे ही हुए।

शेक्सपियर के पिता जान शेक्सपियर घोडे की साज और दस्तानो का व्यापार करते थे और जमीदार किसान थे। माता का नाम मेरी आर्डन था, जो विलमकोटे के एक अच्छे-खासे जमीदार किसान राबर्ट आर्डन की लडकी थी। विलियम शेक्सपियर इस दपती की तीसरी सतान थे और जब वह पैदा हुए, उस समय उनके पिता जान शेक्सपियर एक समृद्ध तथा सम्मानित व्यापारी थे और म्युनिसपल मामलो मे सक्रिय भाग लेते थे। कई पद भी उन्होने प्राप्त किये, यहातक कि सन १५६८ मे वह वरो (म्युनिसपैलिटी) के वेलिफ भी रहे।

विलियम शेक्सपियर के वाल्यकाल के सवध मे निश्चित रूप से कोई जानकारी उपलब्ध नही है, लेकिन यह मानने के पूरे कारण हैं कि उनकी प्रारभिक शिक्षा स्ट्रेटफर्ड के ग्रामर स्कूल में हुई। यह भी वहुत संभव है कि

अपने बाल्यकाल में घूमते-फिरते अभिनयकर्ताओं की कपनियो द्वारा प्रस्तुत अभिनयो को देखकर उनके मन मे भी अभिनेता बनने की आकाक्षा पैदा हुई। अठारह वर्ष से कुछ ऊपर की उम्र में शाटरी की एनी हैथवे से ब्याह करने के बाद किन्ही अज्ञात कारणो से जब वह स्ट्रेटफर्ड से कही चले गये, तो कुछ समय के बाद लदन मे अभिनेता के रूप मे और फिर नाटको के लेखक एव सशोधनकर्ता के रूप मे ही उनका पता चलता है।

इस बात के प्रमाण भी मिले हैं कि १५९२ तक उन्होने अपने काम में इतनी अच्छाई और लोकप्रियता प्राप्त कर ली कि उनके समकालीन उनसे प्रभावित होने लगे। इसके बाद तो नाटक कपनियो तथा उनके नाटको के प्रदर्शन मे उनके योगदान के काफी प्रमाण मिलते हैं। नाटककार और अभिनेता के रूप मे उनकी सफलता ने उन्हे धन भी खूब उपलब्ध किया, जिससे उन्होने लदन और स्ट्रेटफर्ड मे सपत्ति खरीदी। १५९७ मे उन्होने न्यू प्लेस नाम का स्ट्रेटफर्ड का एक बडा मकान खरीदा, जिसमे अवकाश-प्राप्ति के बाद सन १६१० से वह अपने परिवार व मित्रो के साथ रहे और वही ५२ वर्ष की आयु मे २३ अप्रैल १६१६ को उनका शरीरात हुआ। होली ट्रिनिटी के पेरिश चर्च के कब्रिस्तान मे उनके दफनाये जाने का उल्लेख आज भी वहा देखा जा सकता है।

शेक्सपियर की महानता से, उनके ऊचे दरजे का साहित्यकार होने के तथ्य से, हम परिचित थे, किंतु किसी साहित्यिक की स्मृति-रक्षा इतनी अच्छी तरह से की जा सकती है, इसका आभास इससे पहले नही हुआ था। डाक्टर जानसन

की स्मृति-रक्षा के तरीके से ही हम कम प्रभावित नही हुए थे, शेक्सपियर की स्मृति-रक्षा को जिस तरह सुगठित एव व्यापक रूप देकर व्यावहारिक बनाया गया है, उसने हमारे मन में जिज्ञासा पैदा की कि हम भी अपने साहित्यकारो के लिए ऐसी ही व्यावहारिक और ठोस योजनाए क्यो नही बनाते ? व्यास, कालिदास, तुलसीदास और सूरदास तो हमारे कभी न भुलाये जा सकनेवाले साहित्यकार है, प्रेमचद और गणेशशकर विद्यार्थी, प्रसाद और रवीद्रनाथ की स्मृति-रक्षा के लिए भी हमे प्रयत्न क्यो नही करना चाहिए ?

जहातक शेक्सपियर की स्मृति-रक्षा का सबध है, शेक्सपियर की मृत्यु के कुछ वर्षों के अदर ही स्ट्रेटफर्ड-अपॉन-एवन को उनके जन्म-मरण-स्थान के रूप मे मान्यता मिल गई और अठारहवी सदी के मध्य तक उनके द्वारा बोये गये मलबरी वृक्ष (शहतूत) को देखने के लिए इतने दर्शक वहा पहुचने लगे कि मकान-मालिक ने तग आकर उस वृक्ष को ही काट दिया।

शेक्सपियर के सम्मान में व्यापक रूप मे समारोह सन १७६९ मे सुप्रसिद्ध अभिनेता डेविड गैरिक ने सर्वप्रथम स्ट्रेटफर्ड मे आयोजित किया, जिसके प्रचार से स्ट्रेटफर्ड की साहित्यिक तीर्थ-यात्रा के लिए ख्याति हो गई और दूर-दूर से लोग वहा आने लगे। इसके बाद १८४७ मे जब शेक्सपियर का मकान बिकने लगा, तो स्थानीय एव राष्ट्रीय लोकमत ने प्रबल रूप से उसको राष्ट्रीय स्मारक के रूप मे सुरक्षित करने पर जोर दिया, फलतः ट्रस्ट बनकर उसके सरक्षण में वह चला गया। अब शेक्सपियर की जन्मभूमि के सरक्षको की देखरेख मे शेक्सपियर ट्रस्ट काम कर रहा है और एक सदी के अपने

कार्यकाल मे उसने स्ट्रेटफर्ड की शेक्सपिरियन विरासत को बढाने व कायम रखने का महत्वपूर्ण कार्य किया है। शेक्सपियर के जन्म-स्थान के अलावा ट्रस्ट ने उनकी पत्नी एनी हैथवे का मकान, शेक्सपियर द्वारा बाद मे खरीदा गया मकान (न्यू प्लेस), उनकी माता का मकान और उनकी लड़की सुसन्ना का मकान भी खरीद लिये है। इन सबको सुरक्षित-व्यवस्थित रखना अब ट्रस्ट का काम है।

इसके अलावा शेक्सपियर ट्रस्ट ने इस नाट्यकार से सबंधित सामग्री का सग्रहालय, पुस्तकालय और अन्वेषको के काम की चीजो का सग्रह भी तैयार कर लिया है। इस सामग्री मे विलियम शेक्सपियर के नाम भेजा गया प्रसिद्ध क्विने-पत्र भी है तथा शेक्सपियर की कविताओ के विशिष्ट सस्करण भी मौजूद हैं।

१७६९ मे जब शेक्सपियर का समारोह आरभ हुआ, तब बाहर से आये अभिनेता विविध इमारतो को अस्थायी नाट्य-गृह बनाकर उनमे शेक्सपियर के नाटको का अभिनय करते थे। १८२७ मे शेक्सपियर क्लब के सदस्यो ने समारोह के अगस्वरूप शेक्सपियर नाट्यगृह बनाया और १८७९ मे चार्ल्स एडवर्ड फाउलर द्वारा सस्थापित शेक्सपियर स्मारक सघ ने शेक्सपियर स्मारक नाट्यगृह। १९२६ मे उसके जल जाने पर अब आधुनिकतम नाट्यगृह बनाया गया है, जिसका उद्घाटन १९३२ मे हुआ और दर्शको की सख्या व खेल दोनो दृष्टियो से वह बहुत कामयाब हो रहा है। हमे भी इस नाट्यगृह मे शेक्सपियर का 'किग लियर' खेल देखने का सुयोग मिला, जिसे देखकर शेक्सपियर के सोद्देश्य तथा शिक्षाप्रद लेखन की

याद ताजा हो गई ।

अब वहा शेक्सपियर से सबधित इमारतो व साहित्य को ही सभाल कर नही रखा गया है, बल्कि सारे नगर को शेक्सपियर-मय बना दिया गया है ।

स्ट्रेटफर्ड की यात्रा के समय हमने एवन नदी मे नौका-विहार किया, जो दोनो ओर के व्यवस्थित कूलो और यहा-वहा लेटे-बैठे या मछलिया पकडते तरुण-तरुणियो की छटा के साथ नदी मे तैरते बहुसख्यक सफेद हसो के दर्शन से बडा आनददायक लगा । नदी के प्रसिद्ध क्लाप्टन पुल और नाट्य-गृह के बीच के हिस्से को बगीचे का रूप देकर मोहक बनाया गया है और वही 'गोवर मेमोरियल' के नाम से लार्ड रोनाल्ड गोवर द्वारा बनाकर १८८८ मे नगर को भेट की गई शेक्स-पियर की भव्य प्रस्तर-मूर्ति है, जिसके चारो तरफ शेक्सपियर के नाटको मे से सुदर वाक्य अकित हैं और चारो कोनो पर शेक्सपियर के नाटको के प्रमुख पात्रो हेमलेट, लेडी मैकबेथ, फाल्स्टाफ तथा प्रिस हाल की छोटी प्रस्तर-मूर्तिया है । ये क्रमश तत्वदर्शन, दुख (ट्रेजडी), सुख (कॉमेडी) और इतिहास की प्रतीक है । यह स्थान इतना आकर्षक है कि ढाई दिन के अपने निवास मे मैंने कई बार इसे जाकर देखा ।

यह ध्यान देने की बात है कि शेक्सपियर के सभी स्मृति-स्थानो को देखने का चदा लगता है, जिसकी आमदनी से और नाटकघर की आय से चालू खर्च पूरे होने मे और व्यवस्था रखने मे निश्चय ही मदद मिलती होगी । एक ओर शेक्सपियर के साहित्य के विशेष अध्ययन की व्यवस्था है,

दूसरी ओर उनके समय की झलक कायम रखते हुए उनके नाटको के खेले जाने की व्यवस्था , सभी तरह की सपूर्णता हमे वहा मिली । क्या अच्छा हो अगर हमारे यहा साहित्य-कारो की स्मृति-रक्षा की भी ऐसी ही सुनियोजित और आत्मनिर्भर योजनाएं बनाकर कार्यान्वित की जाये !

: ६ :

औद्योगिक प्रगति में अग्रणी मैंचेस्टर

लकाशायर और मैंचेस्टर ऐसे नाम है, जिनसे आजादी के लिए अग्रेजी सरकार के खिलाफ लडाई करनेवाले भारतीय शायद ही अपरिचित हो। अग्रेजी राज के खिलाफ हमारी एक बडी शिकायत यह रही है कि अपने देश की औद्योगिक समृद्धि के अर्थ हमारे उद्योग-धधो को नष्ट होने के लिए बाध्य किया गया। इतिहास और अर्थशास्त्र के ज्ञाता हमारे राज-नीतिक नेताओ ने खोज करके यह भी साबित किया कि हमारे कारीगरो को इतना तग किया गया कि अनेक को अपने अगूठे काट डालने के लिए बाध्य होना पडा। स्वभावत. इससे लका-शायर और मैंचेस्टर के प्रति हमारे मन मे कोई अच्छी भावना नही थी।

लेकिन शेक्सपियर की जन्मभूमि की साहित्यिक तीर्थ-यात्रा के बाद बर्मिघम होकर जब हम मैंचेस्टर पहुचे, तो उसकी औद्योगिक प्रगति और समृद्धि से प्रभावित हुए बिना नही रहा जा सका। बर्मिघम, मैंचेस्टर और लिवरपूल की तरह लकाशायर शहर हमारे देखने मे नही आया, तो हमारा जिज्ञासु मन लंकाशायर के बारे मे पूछे बिना न रहा। तब अपने अज्ञान का मुझे पता लगा और मालूम हुआ कि लकाशायर शहर नही, बल्कि प्रदेश (काउटी) है, जिसके अतर्गत मैंचेस्टर तथा दूसरे

शहर हैं। सचमुच यह प्रदेश औद्योगिक और व्यापारिक दृष्टि से बहुत समृद्ध है, साथ ही सुदर भी ।

मैंचेस्टर हम छः दिन रहे और इस बीच उसके उद्योग-धधो तथा सुदर स्थानो को देखने का काफी सुयोग हमें मिला। परिचयात्मक साहित्य भी हमे दिया गया। उस सबके आधार पर कहा जा सकता है कि पेरिस, न्यूयार्क या लदन की तरह मैंचेस्टर भी अपने रूप मे एक प्रसिद्ध शहर है। साथ ही सौदर्य-स्थलो और ऐतिहासक स्थानो के लिए भी उसकी ख्याति है। दुनिया की घनी-से-घनी औद्योगिक वस्ती का यह केद्र माना जाता है, जबकि वस्तुतः यह औद्योगिक के बजाय व्यापारिक केद्र है ।

ब्रिटेन का लदन के बाद दूसरे नंबर का शहर यही है, हवाई अड्डा भी ब्रिटेन मे लदन के बाद यही का सबसे बडा है । आमोद-प्रमोद एव मनोरजन के साधन, लदन के बाद, यहां से अधिक ब्रिटेन के किसी अन्य शहर मे नही है। नगर बिलकुल आधुनिक है और, अमरीकनो के अनुसार, अमरीकी नगरों से बहुत-कुछ मिलता-जुलता है। विक्टोरियाकालीन वास्तुकला का ब्रिटेन मे यह सर्वोत्तम नमूना माना जाता है और यहा वने माल तथा आर्केस्ट्रा के लिए दुनिया-भर के लोग इसे जानते है। सुदर प्रदेश और पुरानी दुनिया के चेशायर के आकर्षक गावो और सुदर पहाडियो से यह घिरा हुआ है ।

सूती वस्त्रोद्योग के लिए प्रख्यात इस नगर की आबादी मे १० प्रतिशत से अधिक व्यक्ति सूती वस्त्रोद्योग में काम नही करते । इसके अतीत मे जाये, तो तरक्की करते हुए सन ८०० ई० मे यह क्रय-विक्रय का केंद्र बना, १२२९ मे राजा हेनरी

ने यहा हर साल मेला लगाने का हुक्म दिया और १८३८ मे शाही घोषणा द्वारा यहां म्युनिसिपैलिटी (बरो) की स्थापना हुई। औद्योगिक समृद्धि के बीज सभवतः फ्लेमिश धर्मानुयायी शरणार्थियो ने बोये, जो १३३० मे यहा आकर बसे थे। वे अपने साथ सूती वस्त्रोद्योग लाये और उसके कुछ समय बाद ही छः पत्नी रखनेवाले राजा हेनरी अष्टम ने इसे लकाशायर का बडी तेजी से विकसित हुआ, सबसे सुदर एव सर्वोत्तम निर्मित नगर बताया।

मैंचेस्टर के कई नदियो के सगम पर स्थित होने और सभी जगहो से सडक द्वारा सबधित होने के कारण, तथा साथ ही कोयले, नमक व अन्य खनिज सपदा का घर होने से, औद्योगिक क्राति शुरू होने पर इसके औद्योगिक केंद्र बनने की पूरी सुविधा थी। फलतः वाष्प-युग से परमाणु-युग के मध्यवर्ती २०० वर्षों में मैंचेस्टर नये उद्योगो की प्रगति मे सदा अग्रणी रहा। स्टीम-एजिन से चलनेवाला पहला मिल दुनिया मे यही (मिल स्ट्रीट मे) चालू हुआ, ब्रिटेन मे नहरी योजना भी ड्यूक ऑव ब्रिज-वाटर ने सबसे पहले मैंचेस्टर मे बने माल के आवागमन के लिए ही बनाई। मुसाफिर गाडियो की पहली मुख्य रेलवे लाइन भी स्थायी स्टेशनो के साथ मैंचेस्टर-लिवरपूल के बीच ही सन १८३० में बनी। परमाणु-सिद्धात का प्रतिपादन भी १८२५ मे जान डाल्टन ने यही किया था। फिर मैंचेस्टर-विश्वविद्यालय की अनुसधानशालाओ मे ही रुदरफोर्ड ने सबसे पहले परमाणु को कृत्रिम रूप से विभक्त किया और काकक्राफ्ट ने न्यूट्रान का पता लगाया। अब हाइड्रोजन बम का असैनिक कार्यों के लिए उपयोग करनेवाली 'जेता' नाम की ब्रिटिश मशीन

का निर्माण भी मैंचेस्टर की ही एक फर्म ने किया है।

मैंचेस्टर की प्रगति मैंचेस्टर के निवासियो के साहस और उनकी सूझबूझ की द्योतक है। उद्योग बढने पर तैयार माल को लिवरपूल के बदरगाह से बाहर भेजने मे खर्च ज्यादा आता था, अतः १९ वी सदी के अंत मे मैंचेस्टर के लोगों ने जहाजो को ठीक मैंचेस्टर के बीचोबीच लाने के लिए बडी भारी नहर बनाई। इससे माल के निर्यात पर पड़ने-वाला खर्चा ही कम नही हुआ, वरन मैंचेस्टर का बदरगाह माल ढोने की दृष्टि से ब्रिटेन का तीसरा सबसे बडा बदरगाह बन गया।

हवाई युग मे मैंचेस्टर की म्युनिसिपैलिटी ही पहली म्युनिसिपैलिटी थी, जिसने एक हवाई अड्डा बनाया, जो अब यात्रियो और माल की दृष्टि से ब्रिटेन का लदन के बाद दूसरे नबर का हवाई अड्डा है। दुनिया का सबसे बड़ा रेडियो टेलिस्कोप भी यही, मैंचेस्टर-विश्वविद्यालय के अंतर्गत, चेशायर मे जोडरेल तट पर है।

लेकिन औद्योगिक क्राति के आरभ मे मैंचेस्टर जहा खुद माल बनानेवाला कसबा था, अब उसके आसपास के कसबे तेजी से अपने उद्योग बढाने लगे हैं और मैंचेस्टर धीरे-धीरे बैकिग, बीमे, जहाजरानी, यातायात, माल के पैकिग, बिक्री व अन्य सुविधाओ का केंद्र बन गया है। इस तरह औद्योगिक की जगह अब वह व्यावसायिक केंद्र बन गया है और उद्योग-धंधे उसके आसपास कसबो या उपनगरो में विकसित हो रहे है। यही कारण है कि केवल मैंचेस्टर की आबादी जहां सात लाख है, वहा १० मील के

क्षेत्र के अतर्गत जनसख्या साढे बाईस लाख और २० मील के अतर्गत पैंतालीस लाख हो गई है। इस समय बृहत्तर मैंचेस्टर में छ बड़े कसबे या उपनगर है, जिनकी औसत आबादी एक लाख है और एक दर्जन छोटे कसबे इससे आधी आबादी के हैं। हरएक कसबे की अपनी खासियत है और अपने उद्योग। मैंचेस्टर को वे राजधानी की तरह मानते हैं और क्रय-विक्रय तथा थियेटर-आर्केस्ट्रा के लिए वही आते हैं। नित्य पाच लाख व्यक्ति इस तरह मैंचेस्टर मे आते हैं और एक तरह लदन का रूप ही उसने ले लिया है। सभी तरह के लोग वहा आपको मिलेंगे—ग्रीक, भारतीय, चीनी, अमरीकन आदि। ऐसी मिश्र आबादी के कारण ही वहा १६ राष्ट्रों के दूतावास है। नगर के बीचोबीच जिस होटल मे हम ठहरे हुए थे, उसके पास एक भारतीय द्वारा सचालित 'कोहनूर' रेस्ट्रा भी हमे मिला, जहा भारतीय ही नही, विदेशी भी भारतीय भोजन का स्वाद लेकर तृप्त होते थे।

उद्योगो मे अग्रणी इस प्रदेश मे हमने तेल, सूती वस्त्र, इजीनियरिंग और हवाई जहाज के ऐसे कारखाने देखे, जो दुनिया मे चाहे सबसे बडे न हो, किंतु सबसे बडो की गिनती में जरूर आते है।

मैंचेस्टर से ३६ मील की दूरी पर स्टैनलो की जिस शेल आइल रिफाइनरी (क्रूड आइल को साफ करके उससे पेट्रोल तथा तेल आदि तैयार करनेवाला कारखाना) को हमने देखा, उसकी विशालता का अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि वह १८०० एकड़ भूक्षेत्र मे फैली हुई है। एक तरफ से दूसरी तरफ की उसकी लबाई २॥ मील है, उत्पादित तथा दूसरे

माल को इधर-उधर ले जाने के लिए २० मील की रेलवे लाइन है, कई सौ मील मे तेल की पाइप-लाइने हैं, पेट्रोल या तेल रखने की सैकड़ो टकिया हैं, जिनमे दस लाख टन तेल रखा जा सकता है, पचास हजार आबादीवाले चेशायर मे पानी व बिजली का जितना कुल खर्च है, उससे ज्यादा वहा खर्च होता है—हर महीने पाच लाख टन तेल शुद्ध करने के लिए साढे पाच लाख टन ताजा पानी खर्च होता है, जिसमें से दो लाख टन भारी दबाववाली भाप के रूप मे परिणत किया जाता है, पिच्चासी लाख यूनिट बिजली खर्च होती है और ठडा करने की प्रक्रिया में एक करोड तीस लाख टन पानी ३४१ फुट ऊचे कूलिग टावर मे होकर आता है । यह कूलिग टावर दुनिया मे सबसे बडा बताया जाता है ।

तेल-शोधक कारखाने के बारे मे बताया गया कि ब्रिटेन मे शेल कपनी के जो ४ कारखाने हैं, उनमे यह (स्टैनलो का) सबसे बड़ा है । यह कारखाना सारे यूरोप मे सबसे रोचक और बडा पेचीदा है । इसमे काम विद्युतशक्ति से स्वचालित होता है, फिर भी पाच हजार व्यक्ति इसमे काम करते हैं और एक हजार इससे सबधित थार्नटन के शोध-केद्र मे ; अनेक ठेकेदार उनके अलावा । पश्चिमी एशिया से क्रूड आइल लाने और पेट्रोल व तेल यहा से ले जाने का काम ६० समुद्री तेलवाहक जहाजो द्वारा बराबर होता रहता है, जो स्टैनलो से ७ मील पर बने तेलवाही जहाजो के बदरगाह से जाते-आते हैं । इसके अलावा माल भेजने के लिए स्टैनलो के पास ही नहर बनाई गई है, जिसमे भी ६ तेलवाही जहाजो की व्यवस्था है ।

तेल का कारखाना देखने का मेरे लिए यह पहला अवसर था,

अतः क्रूड आइल को देखने की जिज्ञासा पूरी किये बिना नहीं रहा जा सका। क्रूड आइल से पेट्रोल व तेल निकालने तथा बचे हुए पदार्थ से अन्य चीजे (बाईप्रोडक्ट्स) तैयार करने की प्रक्रिया तो बहुत पेचीदा थी, जिसे मशीनो के पास और ऊपर जाकर भी हजम नही किया जा सका, पर क्रूड आइल के बारे मे इतना जरूर मालूम हुआ कि वह बिलकुल अनाकर्षक और काला या गहरा भूरा होता है और उसमे दुर्गंध आती है।

प्राप्त साहित्य के अनुसार क्रूड आइल युगो पुराने और अब विलुप्त समुद्रो की सतह मे पृथ्वी की परत के नीचे पाया जाता है, जहा अनगिनती पशुओ, प्राणियों व वनस्पतियो के अवशेष हजारो-लाखो वर्षों के काल मे सड-गलकर तथा भूगर्भ की भारी गरमी, दाब और रासायनिक प्रक्रियाओ से गुजरकर क्रूड आइल का रूप धारण कर लेते है।

यो कहने को तो आदमी को क्रूड आइल का बहुत पहले से ज्ञान था, पर व्यापारिक रूप मे इसका उपयोग कोई सौ वर्ष से कुछ पहले ही शुरू हुआ है। उसके बाद से तो तेल दुनिया मे शक्ति का एक बडा साधन हो गया है और दुनिया मे अबतक जितना तेल निकाला गया, उसमे आधा पिछले दस वर्षों मे निकला है, यानी दिनोदिन उसे अधिक परिमाण में निकालकर काम मे लाया जाने लगा है। भूगर्भ-शास्त्री और अन्य अन्वेषक इसका पता लगाते है, फिर इजीनियरो, केमिस्टो और कारीगरो की सम्मिलित कुशलता से विविध मशीनो और प्रक्रियाओ द्वारा इससे पेट्रोल व दूसरे पदार्थ अलग-अलग किये जाते हैं।

पेट्रोल से मोटर, जहाज व हवाई जहाज चलते हैं;

अन्य उत्पादनो का उपयोग इस्पात, विविध रासायनिक पदार्थो, सड़क आदि के निर्माण तथा अन्य धातुओ में होता है। क्रूड आइल से पेट्रोल व तेल निकालने के कारखाने पहले क्रूड आइल उपलब्ध होने की जगह या उसके आसपास ही होते थे, पर अब सामरिक तथा उपयोगिता की दृष्टि से अन्यत्र भी कायम होने लगे हैं। स्टैनलो का कारखाना ऐसा ही कारखाना है और पहले विश्व-युद्ध के बाद (१९२२ मे) शुरू होकर द्वितीय विश्व-युद्ध के समय या उसके बाद इतना विशाल एव सपूर्ण बना है।

हमारे देश मे दुर्गापुर मे इस्पात का कारखाना बनानेवाले उद्योग तथा कारखानो के सगठन 'इसकान' से सबधित मेट्रोपालिटन विकर्स इलेक्ट्रिकल एक्सपोर्ट कपनी तथा साइमन कार्व्स लिमिटेड को भी हमने देखा। इनमे भाखडा और दुर्गापुर के लिए बन रहे बडे-बडे टरबाइन ही नही देखे, बिजली व इजीनियरिंग का विविध और विशालकाय सामान देखकर मन उसकी पेचीदगी और विशालता से अभिभूत हो गया। वही इजीनियर और कारीगर तैयार करने के शिक्षणालय भी इस बात के सूचक थे कि वहा प्रशिक्षित इंजीनियर ऊचे दरजे का व्यावहारिक ज्ञान अवश्य रखते होगे।

सूती वस्त्र का कारखाना, जो हमने देखा, उससे बडे कारखाने शायद हमारे देश मे भी हो, लेकिन उसकी परिचय-पुस्तिका के (कर्मचारियो के प्रति) इस संबोधन ने हमे आकर्षित किया :

"मैं (कारखाने का अध्यक्ष) आपका इस कारखाने में

स्वागत करता हू और आशा करता हू कि हमारी कंपनी के लिए काम करते हुए आप अपने को खुश पायेगे।...(कंपनी का) नाम उसके अच्छी किस्म के माल का द्योतक है—यह ऐसी ख्याति है, जो प्रबधको और कारीगरो के वर्षों के सहयोग से प्राप्त हुई है। भविष्य मे अगर हमे इस ख्याति को कायम रखना है, तो कुशलता का मान बराबर बढाये रखना होगा। इसमे आपकी पूरी मदद की जरूरत है, जो वफादारी के साथ, पूरी हाजरी और मन लगाकर काम करने के रूप मे होनी चाहिए। जहातक हमारा सबध है, आपके काम या नौकरी को आरामदेह और सुखद बनाने का प्रबधक भरसक पूरा प्रयत्न करेगे।"

हमने देखा कि इस कारखाने मे केवल कर्मचारियो के खाने, बचत, विश्राम, चिकित्सा, आपसी परामर्श, प्रशिक्षण, अन्वेपण आदि की ही व्यवस्था नही थी, बल्कि काम करनेवाली माताओ के बच्चो के लिए 'डे नर्सरी' की भी व्यवस्था थी, जहा दिन मे काम पर जाते समय माताए अपने वच्चो को नर्सो की व्यवस्था और देखरेख मे छोडकर जासकती थी। सफाई भी हमे सब जगह अच्छी मिली।

जिस 'एव्रो ७४८' हवाई जहाज के भारत मे निर्माण का सौदा भारत-सरकार ने एव्रो फैक्टरी (ए० वी० रो० एड कपनी) से किया है, मैंचेस्टर जाकर उसे न देखना सभव नही था। हमे खुशी हुई कि हमारे आगमन पर फैक्टरी पर ब्रिटिश झडे के साथ-साथ भारतीय झडे को भी लहराया गया और कपनी के हवाई अड्डे पर स्थित भोजनालय मे भोजन के समय मेज पर भी ब्रिटिश झडे के साथ भारतीय झडा भी रखा

गया। लेकिन इससे भी अधिक आकर्षण हमे इस फैक्टरी को देखकर हुआ, जिसमे तीन सौ से अधिक इजीनियर डिजाइन तथा संशोधन के नकशे बनाने मे ही सलग्न थे। पहले हवाई जहाज का डिजाइन बनाकर माडल तैयार किया जाता है, फिर उस पर परीक्षण करते हुए उसमे सुधार किये जाते हैं और सब तरह के परीक्षणो मे सफल होने के बाद ही उसका निर्माण शुरू होता है।

हवाई जहाज की यह कपनी बडी ही नही थी, इसमे ब्रिटिश सेना के लिए विशालकाय 'वल्कन' बमवर्षक भी बन रहे थे, जिनके बारे मे बताया गया कि इस बमवर्षक का नमूना जारी होने के वक्त शाही वायुसेना मे जो स्टैंडर्ड बमवर्षक (लिकन) थे, उनसे गति और उडान की ऊचाई (क्रूजिग आल्टीट्यूड) मे यह सौ फीसदी से भी ज्यादा आगे बढा हुआ है। यही नही, यह भी बताया गया कि युद्ध मे कुल ७३६६ लकास्टर बमवर्षको ने जितने वजन के बम ढोये, उनसे अधिक संहारक शक्ति के परमाणु-आयुध वह एकसाथ ले जा सकता है।

हमने देखा कि यहा बननेवाले एव्रो ७४८ विमान भी कम आकर्षक नही थे। बारीकियो को समझना तो विशेषज्ञो का ही काम है, पर जो कुछ बताया गया, उससे लगा कि सुरक्षा का ध्यान रखते हुए इसमे अधिक यात्रियों और सामान के ले जाने की व्यवस्था होगी तथा थोडे हेर-फेर के साथ फौजी कामों के लिए भी इसे काम मे लाया जा सकता है। वायुयान-निर्माण मे एव्रो कपनी पचास वर्ष से ऊपर का अनुभव रखती है और ब्रिटेन के अलावा बाहर

भी उसके हवाई जहाज काम मे लाये जा रहे है। फिर भारत-सरकार के सौदे मे भारत को अपने यहा इन्हे बनाने के साथ-साथ दूसरे देशो को बेचने की सुविधा भी है, जो कम लाभ नही। हमे लगा कि सौदा बुरा नही है और इस कल्पना से मन आह्लादित हुआ कि देश मे ही हवाई जहाजो के निर्माण मे भी हमारा देश अद्यतन और स्वावलबी बनने के लिए प्रयत्नशील है।

: १० :

अखबारों की दुनिया

अखबारी व्यक्ति के विदेश जाने पर उसे वहा के अखबारों की स्थिति जानने की आकाक्षा रखना स्वाभाविक है । अपनी इस यात्रा मे जहा हमने ब्रिटेन की औद्योगिक प्रगति और वहा के जन-जीवन को देखने का सुयोग पाया, वहा अखबारी लोगो से मिलने, बात करने और कुछ अखबारो मे जाने के अवसर भी मिले । 'रायटर' की समाचार-एजेसी और ब्रिटिश ब्रॉडकास्टिग कारपोरेशन (बी० बी० सी०) मे भी हम गये । अखबार तो हम रोज देखते और पढते ही थे । अखबारो सबधी साहित्य भी हमे प्राप्त हुआ । वहा के अखबारो की ग्राहक-सख्या और उनकी समृद्धि देखकर चकित हुए बिना नही रहा जा सकता ।

सेट्रल आफिस ऑव इनफार्मेशन द्वारा प्रदत्त साहित्य के अनुसार ब्रिटेन मे प्रति व्यक्ति खरीदे जानेवाले अखबारो का औसत दुनिया-भर मे सबसे ज्यादा है । प्रति सहस्र व्यक्तियो पीछे वहा रोज ६०९ अखबार खरीदे जाते हैं, जबकि अमरीका-जैसे समृद्ध और प्रगतिशील देश में (यूनेस्को की रिपोर्ट के अनुसार) सिर्फ ३५२ और स्वीडन (जिसका जीवन-मान यूरोप मे सबसे ऊचा माना जाता है) मे ५०६ । दैनिक पत्रों की खपत सर्वाधिक होने पर भी, तुलनात्मक रूप मे, सख्या

मे वहा प्रात.कालीन दैनिक पत्र कम हैं, लेकिन उनमे से कुछ की ग्राहक-सख्या दुनिया मे सबसे अधिक है । दस हजार से पैंतालीस लाख तक की ग्राहक-सख्यावाले इन पत्रो की दैनिक खपत का औसत २,५४,००० प्रतिया है । सयुक्त राज्य अमरीका की सोलह करोड अस्सी लाख आबादी की तुलना मे ब्रिटेन की पाच करोड दस लाख आबादी यद्यपि कम है, फिर भी रविवासरीय 'न्यूज ऑव दी वर्ल्ड' की ग्राहक-सख्या सत्तर लाख है, जबकि अमरीका के सर्वाधिक विक्रीवाले 'न्यूयार्क-टाइम्स' के रविवासरीय सस्करण की ग्राहक-सख्या सिर्फ पैंतीस लाख है । ए० बी० सी० (आडिट ब्यूरो ऑव सरक्यूलेशन) के जनवरी से जून १९५८ के आकडो के अनुसार ब्रिटेन के राष्ट्रीय (यानी राष्ट्रव्यापी) कहे जानेवाले दस प्रातःकालीन दैनिकों की ग्राहक-सख्या निम्नप्रकार है

१	टाइम्स	२,४८,२४८
२	डेली टेलीग्राफ	११,०८,५१४
३	मैंचेस्टर गार्जियन	१,७८,६६२
४	न्यूज क्रानिकल	१२,६७,३४१
५	डेली एक्सप्रेस	४०,४०,५७२
६	डेली मेल	२१,०५,९८८
७	डेली हेरल्ड	१५,२३,३३४
८	डेली वर्कर	उपलब्ध नही (एक अन्य विवरण के अनुसार ६२,३५१)
९.	डेली मिरर	४५,२६,४५३
१०.	डेली स्केच	१२,२३,९४८

फरवरी १९६१ में प्रकाशित आकडों के अनुसार ब्रिटेन के प्रमुख राष्ट्रीय पत्रो की ग्राहक-सख्या १९६० के उत्तरार्ध मे इस प्रकार थी :

१. डेली मिरर	४६,१३,९११
२. डेली एक्सप्रेस	४२,७३,४१३
३. डेली मेल	२७,५०,८२९
४. टाइम्स	२,५९,६९२
५. मैंचेस्टर गार्जियन	२,१२,२६३

जहांतक पत्रो की आमदनी का सबंध है, उसके पूरे आकडे तो उपलब्ध नही, लेकिन २९ नवबर १९५७ के 'वर्ल्ड्स प्रेस न्यूज' के अनुसार ३० जून, १९५७ को समाप्त होनेवाले बारह महीनो मे बीवरब्रुक अखबारो ने (जिनमे लदन के 'डेली एक्सप्रेस,' 'ईवनिग स्टैंडर्ड' और 'सडे एक्सप्रेस' के अलावा ग्लासगो का 'ईवनिग सिटीजन' भी शामिल है) २,८३,४७,९९६ पौड कमाये। इसमे १,५७,३१,१९७ पौड आय अखबारो की बिक्री से हुई और १,१८,४१,२५४ पौड विज्ञापन से प्राप्त हुए। इनके अलावा ३,५४,५८० पौड विविध मदो से।

यह ध्यान देने की बात है कि जबसे अखबारो ने उद्योग का रूप धारण किया है और अखबारो को लोक-रुचि का तथा सस्ता बनाकर ग्राहक-सख्या बढाने की प्रवृत्ति बढी है, विज्ञापनो से कमाई का महत्व बढता जा रहा है। १९५६ और १९५७ के दो वर्षों में ही विज्ञापनो से हुई आमदनी के निम्न अक इसके द्योतक है ·

	१९५६	१९५७
	(विज्ञापन-आय पौडो मे)	
लंदन के राष्ट्रीय दैनिक	२,५७,४०,२५९	२,७४,४८,८२३
लदन के सध्या-कालीन पत्र	५५,४३,११०	५३,०२,०९१
राष्ट्रीय रविवासरीय	१,०७,६०,४९५	१,२६,५९,९०७
प्रातीय दैनिक पत्र	१,२५,९१,३११	१,२८,२६,०७६
प्रातीय और उपनगरीय साप्ताहिक	४०,४०,२४६	४२,१२,३३३
पत्रिकाए (मासिक आदि)	२,७६,१८,३४८	२,७२,६७,२९३
टेकनिकल पत्र	२८,६४,४३४	३३,०६,३६६
व्यापारिक पत्र	२८,६४,७६६	३२,२२,२८३
कुल	९,२०,२२,९६९	९,६,४५,१७२

अखबारो की आय मे विज्ञापनो से होनेवाली आय का औसत बढते जाने का ही यह परिणाम है कि पहले से कीमते बढने पर भी ब्रिटिश पत्र अभी भी बहुत सस्ते है—'टाइम्स' (४ पेस) और 'मैंचेस्टर गार्जियन' (३ पेस) को छोडकर अधिकाश का मूल्य २॥ पेस ही है।

यह स्थिति एकदम नही आ गई है। काफी कशमकश के बाद बाधाओ से मुक्ति तथा सुविधाओ की उपलब्धि से ही ऐसा हुआ है। यो ब्रिटिश पत्रो का इतिहास सोलहवी सदी से शुरू

होता है और सत्रहवी सदी मे उनका विकास हुआ, जब लेखक काफी हाउसो की गपशप तथा गभीर समाचार सग्रह करके समाचारो की चिट्ठियों के रूप मे लदन से प्रातो के अपने ग्राहको को भेजने लगे ।

छपाई इग्लैड मे सन १५०० से पहले अज्ञात थी, लेकिन १५०० मे छापेखाने शुरू हो जाने पर भी सरकार द्वारा बिना अनुमति (लाइसेस) लिये किसी भी चीज का छापना कानूनन इतना नियत्रित था कि १६०० तक समाचारो की ज्यादातर चिट्ठिया हाथ की लिखी होती थी । १६९३ मे कानूनो की कठोरता थोडी कम होने पर समाचारो की चिट्ठियो की जगह साप्ताहिक पत्रो ने ले ली। छपी चीजो के लाइसेस सबधी कानून को १६९३ मे पार्लामेंट ने सिर्फ दो वर्ष के लिए स्वीकृत किया था, फलतः १६९५ में सेसरशिप का खातमा हो गया और ब्रिटेन मे अखबारो की स्वतत्रता कानून से कायम हो गई ।

इससे अखबारो का रास्ता तो खुला, पर मानहानि का कानून और कर (स्टाप ड्यूटी, पेपर यूड्टी तथा विज्ञापन-कर) फिर भी भारी रुकावट थे। मानहानि का कानून ऐसा था कि सरकार की आलोचना पर कोई भी सपादक जेल भेजा जा सकता था, क्योकि फैसला करनेवाले जज सरकारी नौकर थे और सरकारी आलोचना बरदाश्त करने की हिम्मत नही करते थे । इस कानून के खिलाफ १७९२ मे इतना सार्वजनिक रोष सामने आया कि १७९५ मे एक कानून स्वीकृत कर इस बात का फैसला जज के बजाय जूरी पर छोड दिया गया कि आलोचना से वस्तुतः मानहानि हुई या नही । इस तरह परोक्ष सरकारी सेसर का खतरा बहुत-कुछ दूर हो गया । कर जो

१७१२ में लगाये गये थे, वे १८१५ तक इतने बढ गये थे कि उदाहरण के रूप मे, 'टाइम्स' की लागत प्रति अक ७ पेस पडने लगी, जबकि उस समय किसी मजदूर की औसत आमदनी लगभग १५ शिलिग प्रति सप्ताह ही थी। इसका अर्थ हुआ कि अखबारो का अस्तित्व सिर्फ उच्च वर्ग के लिए था, क्योकि वही इतना खर्च बरदाश्त कर सकते थे। १९ वी सदी के उतरार्ध की उदार हलचलो ने इस स्थिति को बदला और १८६१ तक ये सभी कर खतम कर दिये गये और फिर कभी नही लगे। अब युद्धकाल को छोडकर अखबार सरकारी सेंसर से मुक्त हो गये और ऐसे करो से भी उन्हे मुक्ति मिल गई, जिनके कारण वे एक ही वर्ग के पाठको तक सीमित हो जाते थे।

अखबारो के प्रसार की दृष्टि से दो महत्वपूर्ण घटनाए और हुईं—रेलवे की वृद्धि और शिक्षा को नि.शुल्क एव अनिवार्य करके शिक्षितो का बढाया जाना। १८५० के बाद ब्रिटेन में रेलवे की वृद्धि होने से १९०० तक लदन से प्रकाशित होनेवाले समाचारपत्र ब्रिटिश द्वीपसमूह के किसी भी हिस्से मे, चाहे वह कितना ही दूर क्यो न हो, छपने के दूसरे दिन पहुचने लगे (अब तो वे दूर के कुछ द्वीपो को छोडकर सारे देश मे उसी दिन पहुच जाते है)। इसके अलावा उन्नीसवी सदी के अतिम दशको मे निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा जारी होने से अखबारो मे छपे समाचार पढने-समझनेवालो का दायरा बढ गया। इस तरह अखबारो के प्रसार का रास्ता साफ हो गया और लदन के अलावा अन्य नगरो से भी प्रातःकालीन दैनिक पत्र निकलने लगे।

लेकिन अखबारी प्रसार को एक नया और निराला मोड

लंदन से निकलनेवाले 'डेली टेलीग्राफ' ने दिया, जिसने प्रारंभ मे अपना मूल्य २ पेंस प्रति अक रखा और कुछ सप्ताह बाद उसे भी घटाकर १ पेंस कर दिया। उसने घोषणा की कि वह "उच्चतम वर्ग के लिए नही, बल्कि लाखो व्यक्तियो के लिए है।" फलतः १८६१ तक, यानी ५-६ वर्षों मे ही, उसकी ग्राहक-संख्या 'टाइम्स' से, जिसकी ग्राहक-सख्या पैंसठ हजार प्रति दिन थी, दूनी से भी ज्यादा हो गई, और १० साल बाद वह (डेली टेलीग्राफ) 'दुनिया मे सबसे अधिक ग्राहक-सख्या' का दावा करने लगा—उसकी दैनिक ग्राहक-सख्या २,४०,००० से ज्यादा थी।

१८७० मे शिक्षा के क्षेत्र मे किये गये उपायो से, यानी शिक्षा को निःशुल्क और अनिवार्य कर देने से, जव निम्न मध्य-वर्ग और मजदूर वर्ग के शिक्षित हो जाने से पढनेवालो का क्षेत्र बढ़ रहा था, तो अखबारी पाठको का ऐसा नया वर्ग पैदा हुआ, जो पढ तो सकता था, पर उसके पास न तो पहले के पाठको के समान काफी समय था और न वैसी सास्कृतिक विरासत ही थी।

इस नये वर्ग के लिए जार्ज न्यूस ने सप्ताहिक 'टिटबिट्स' निकाला, जिसकी तीन महीने मे ही नौ लाख ग्राहक-सख्या हो गई; इसके बाद १८८८ मे टी० पी० आकोनोर ने आधा पेंस मूल्य का साध्यकालीन दैनिक 'स्टार' निकाला, जिसमे मोटे-मोटे शीर्षक तथा मनुष्यो को आकर्षित करनेवाली सामग्री रहती थी। १८९६ मे एल्फ्रेड हार्म्सवर्थ ने, जो बाद मे लार्ड नार्थक्लिफ के नाम से प्रख्यात हुए, इस स्थिति का पूरा लाभ 'डेली मेल' निकालकर उठाया। इसमे पाठको को ऐसे समाचार

दिये जाते थे, "जिनके बारे मे, जब ऐसे किसी के साथ वे घटित हो, जिन्हे वे जानते हैं, तो लोग चर्चा करते हैं और दूसरे के खासकर प्रसिद्ध लोगो के—साथ घटित होने पर पढना पसद करते हैं।" फलत १६०० तक 'डेली मेल' की ग्राहक-सख्या पाच लाख हो गई और ३० साल तक इस क्षेत्र मे उसीका प्रभुत्व रहा।

'डेली मेल' का मूल्य पहले केवल आधा पेस रखा गया था (फिर १ पेस होकर अब १॥ पेस हो गया है), जिससे विक्री के अलावा आमदनी के लिए नये जरिए ढूढने पडे। विज्ञापनो से होनेवाली आय पहले अखबारो के लिए बिक्री से होनेवाली आय मे सहायक हुआ करती थी, 'डेली-मेल' ने उसीको मुख्य आमदनी बनाया। फलतः दैनिक पत्रो का बढिया किस्म के और लोकप्रिय पत्रो के रूप मे ही विभाजन नही हुआ, बल्कि अधिक ग्राहक-सख्या की दौड मे यह भी तय होगया कि जिस पत्र की ग्राहक-सख्या जितनी अधिक होगी, उतनी ही अधिक दर से उसे विज्ञापनदाता विज्ञापन देगे। पबलिक (लिमिटेड) कपनी भी सबमे पहले 'डेली मेल' की ही बनी। इसका सीधा अर्थ यह था कि व्यापारिक रूप में पत्रो मे रुपया लगाया जाये। तभी से पत्र-उद्योग वहा का एक मुख्य उद्योग बन गया है।

इस तरह अखबारो के रास्ते की रुकावटे दूर होने, वितरण और पठन का क्षेत्र विस्तृत होने और फिर उनकी आमदनी का दारोमदार केवल बिक्री पर न रख विज्ञापनो को आमदनी का मुख्य जरिया बना लेने तथा पाठको की रुचि के अनुसार उन्हे बनाने की प्रक्रिया मे ब्रिटेन मे

अखबार आज एक मुख्य उद्योग बन गया है और अखबारो की ग्राहक-सख्या चोटी पर पहुच चुकी है। १६५५ मे मैंचेस्टर स्टेटिस्टिकल सोसायटी मे भाषण करते हुए स्व० श्री ए० पी० वाड्सवर्थ ने अनुमान लगाया था कि १८०० मे किसी दैनिक की ग्राहक-सख्या पाच हजार से ज्यादा नही थी, १८५० मे पचास हजार से ज्यादा नही थी और १६०५ तक ज्यादा-से-ज्यादा ७,५०,०० हो गई थी। १६१८ के बाद तो ग्राहक-सख्या दुगुनी से अधिक हो गई है और अखबारों की कुल तीन करोड़ की दैनिक बिक्री के बाद, एक अनुमान के अनुसार, ऐसा लगता है कि अब उसके बढने की और गुजाइश नही रही है।

इस तरह ब्रिटेन के अखबार प्रसार और आमदनी की दृष्टि से चोटी पर पहुचे हुए हैं, फलत. अपने यहा काम करने-वालो तथा पत्रकारो पर और समाचार व जानकारी उपलब्ध करने पर वे खूब खर्च कर सकते हैं। पत्र को अधिकाधिक जानकारीपूर्ण और आकर्षक बनाना ऐसी हालत में स्वाभाविक है।

लोकाकर्षण या अधिकाधिक पाठक और विज्ञापन आकर्षित करने की दौड़ मे इनकी श्रेष्ठता कम न हुई हो, यह एक विवादास्पद बात है। यह भी एक शिकायत है कि विज्ञापन ही आमदनी का मुख्य जरिया बन जाने से पत्रों की नीति पर विज्ञापनदाता का असर पडता है। सरकार द्वारा १६४७ मे नियुक्त प्रेस कमीशन ने पिछली शिकायत पर कहा है कि विज्ञापनदाताओ का पत्र की नीति पर असर नगण्य है। बाहरी आर्थिक हितो से ब्रिटिश पत्रो को सर्वथा

मुक्त बताते हुए उसने कहा है कि उनकी नीति उन्हे चलाने-वालो (सचालको) की नीति है। पहली शिकायत स्पष्ट रूप मे मान्य न करते हुए भी पत्रो को तीन श्रेणियो मे विभक्त करके एक तरह यह स्वीकार कर लिया गया है कि श्रेष्ठता ही अब पत्रो का ध्येय नही है। श्रेष्ठ, लोकप्रिय तथा सनसनी-खेज (छोटे साइज़ के सचित्र) इन तीन श्रेणियो मे प्रेस कमी-शन ने पत्रो का विभाजन किया है और जिन दस राष्ट्रीय दैनिको का हमने इस लेख मे जिक्र किया है, उनमे से पहले ३ को श्रेष्ठ, बाद के ५ को लोकप्रिय और अतिम २ को सन-सनीखेज शुमार किया है।

ब्रिटेन के एक महीने के प्रवास मे वहा के पत्रो को देखते हुए हमपर यही छाप पडी कि उनमे से अधिकाश सस्ते लोक-रजन के लिए कामोत्तेजक, अपराधो के तथा खेल के समाचारो को ही प्रमुखता देते और सनसनीदार ढग से प्रस्तुत करते हैं। ब्रिटेन के सर्वोत्तम पत्रकार चाहे 'मैंचेस्टर गार्जियन' के बहुउद्धरित अग्रलेख मे वर्णित इन सिद्धातो पर आज भी चलते हो कि "आलोचना जो चाहे करो, पर तथ्यो मे तोड-मरोड न करो", लेकिन अपने देश के समाचारो को वहा के पत्रो मे जितने कम और जिस तोड-मरोड के साथ प्रकाशित होते देखा, उससे ऐसा नही लगा कि इस सिद्धात का सामान्य रूप मे पालन किया जाता है। बल्कि, इस दृष्टि से, अपने यहा के पत्र हमे ब्रिटेन के पत्रो से बुरे नही लगे, साथ ही स्व० देवदास गाधी का वह कथन भी याद हो आया, जिसमे अमरीकी पत्रो के भारीभरकमपन पर उन्होने कहा था कि उनमे जानेवाले फालतू मैटर को कम करके अगर उतना

अखबारी कागज हमे (भारत के पत्रो को) दे दिया जाये, तो हमारे पत्रों की अखबारी कागज की कठिनाई दूर होकर उनके विकास मे मदद मिलेगी। जहातक ग्राहक-संख्या और विज्ञापन से आय का संबध है, जिन स्थितियो मे ब्रिटेन मे वह बढी, वे स्थितियां हमारे यहां बढने पर यहा भी उनका बढना निश्चित है। आजादी के बाद साक्षरता और उद्योगों की दिशा में हुई वृद्धि का असर हमारे यहा पत्रों की ग्राहक-सख्या और विज्ञापन-वृद्धि पर न पड़ रहा हो, ऐसा नही कहा जा सकता।

: ११ :

सधा हुआ जीवन

अखबार सामान्यत जन-जीवन के प्रतीक होने चाहिए। इस कसौटी पर चले, तो ब्रिटेन के—और सामान्यत पश्चिम के—लोगो का सामाजिक जीवन कामवासनापरक, अपराध-बहुल और खेलपसद होना चाहिए। पूर्व के विपरीत जैसा खुला जीवन वहा है, स्त्रिया और और युवतिया जिस आजादी के साथ दफ्तरो और दूकानो मे काम करती तथा तितलियो की तरह फुदकती और मुसकराती हैं, सडको और बाग-बगीचो मे अपनी समवयस्काओ के साथ ही नही बल्कि अपने समवयस्को के साथ भी स्त्रियो और युवतियो को जैसे हिले-मिले घूमते-फुसफुसाते देखा जा सकता है, यही नही, बल्कि 'कोर्टशिप' के दौरान या सद्य परिणीताओ के रूप मे युवतियो को बगल मे दबाये तरुणो को खुली सडको मे घूमते भी कोई सकोच नही होता, चुबन और आलिगन के दृश्य भी यदा-कदा देखने को मिल जाते हैं—वह सब देखकर पूर्व का रूढिवादी तथा अपने को ही सर्वाधिक पवित्र और चरित्रवान मानने का अभ्यस्त मन पश्चिमी लोगो के जीवन के बारे मे शकाशील हो उठे, तो अस्वाभाविक नही। लेकिन हर चीज के अलग पैमाने होते है। यह जरूरी नही है कि हमारी ही तरह जो रहता-बर्तता न हो, वह पवित्रता या चरित्र मे हमसे कम ही होगा।

पश्चिम के सामाजिक जीवन को समझने का प्रयत्न करने पर यह बात पक्की तरह हमारे मन मे बैठ गई और ऐसा मानने की कोई वजह नही मिली कि चरित्र या पवित्रता मे पश्चिम के स्त्री-पुरुष हमसे किसी भी तरह नीचे दरजे के हैं।

इसमे सदेह नही कि ब्रिटेन मे और सभी पश्चिमी देशो में रहन-सहन का तरीका हमारे यहा से भिन्न है। पैदा होने पर खुशी और मरने पर रज तो सभी जगह स्वाभाविक है, लेकिन हमारे यहा की तरह बच्चे की पैदायश पर वहा थाली या तवा बजाये जाने अथवा बदूक के धमाके किये जाने का रिवाज हमने नही सुना। और न मरने पर बाकायदा रोने या स्यापे का दृश्य ही हमारे देखने मे आया। पैदा होने पर नाल गाढने का रिवाज तो अस्पतालो या सुश्रूषागृहो मे प्रसव के साथ हमारे यहा भी मिट रहा है, वहा पैदा होने के बाद चर्च (गिरजाघर) मे बप्तिस्मे, स्कूल मे पढाई, वयःप्राप्ति के बाद विवाह और नौकरी या व्यवसाय, बुढापे मे अकेले-पन के जीवन के साथ बीमारी मे घर के बजाय अस्पताल पहुंचाने का आम रिवाज है। बच्चों को मा के साथ सुलाने के अभ्यस्त हम यह कल्पना भी नही करना चाहेगे कि वहां—गुजाइश हो, तो—बच्चो का कमरा अलग रहता है। एक अग्रेज मित्र के यहा हमने यह भी देखा कि बच्चे को शाम के ७ बजे, यानी बड़ो से काफी पहले, सोने को भेज दिया जाता था। एक भारतीय दपती के यहा, जिनके ब्याह के बाद लदन मे ही तीन बच्चे हुए हैं, हमने देखा कि तीनो छोटे बच्चो के सोने की व्यवस्था अलग कमरे मे थी और

माता-पिता का शयन-कक्ष अलग था। एक रात जब १० बजे बाद हम उनके यहा से खाना खाकर लौट रहे थे, तो हमने देखा कि बच्चागाड़ियो मे छोटे बच्चे तब भी घर के बाहरी बगीचे (लान) मे खुले में सोये हुए थे, जबकि कम सरदी मे भी वहा की रात यहा की सरदियो की रात से कम सर्द नही थी।

अपने देश मे हम ऐसी स्थिति की कल्पना भी नही कर सकते, लेकिन वहा इसमे कोई असामान्यता न थी। इसी तरह सहशिक्षा और दफ्तरो मे स्त्रियो के प्रवेश के साथ स्त्री-पुरुषो और युवक-युवतियो का मिलना-जुलना अब हमारे यहा भी वर्जित और अपवादस्वरूप चाहे न रहा हो, पर तरुण-तरुणियो का स्वय ही अपने लिए वर-वधू की तलाश करना, मिलने-जुलनेवालों मे अपने उप-युक्त की तलाश मे रहना, मेल-जोल बढने या बढ़ाने पर प्रेमी-प्रेमिका बनना, कोर्टशिप चलाना, अभिभावको की स्वी-कृति से या अपने आग्रह से परिणय, न पटने या पति-पत्नी मे से किसी एक के दूसरे पुरुष या स्त्री के प्रेम-बंधन मे बध जाने पर विवाहविच्छेद आज भी हमारे लिए अजीब लगने-वाली बाते हैं।

इससे भी अजीब वह कल्पना है, जो हमने लदन में एक थिएटर में 'कप्लेसेंट लवर' नाम का खेल देखकर पाई। कथानक कुछ इस प्रकार था कि एक सभ्रात दपती हैं, जिनके बच्चे हैं और दोस्त भी। उनके यहां आनेवाले एक अविवाहित दोस्त उनकी पत्नी के प्रेमी है और उन्हीके घर रहनेवाली या किसी दोस्त की एक जवान लडकी भी उनके प्रेम-पाश

में आबद्ध है। गृहस्वामिनी भावनाओ मे जवान, पर उम्र-वाली है, जबकि जवान लडकी सचमुच जवान है। 'कप्ले-सेट' या दूसरो को अनुगृहीत करनेवाला प्रेमी समय-समय दोनो के प्रेम का प्रतिदान करता है। गृहस्वामिनी प्रेमिका के प्रणयानुरोध पर वह शिकायत करता है—"तुम अपने पति को जितने दिन देती हो, उतने मुझे नही देती।" आखिर तय होता है कि कुछ दिन वह किसी बहाने अन्यत्र जायेगी और वहा अपने प्रेमी की ही होकर रहेगी। भला और भोला पति उसके जाने और बाहर रहने की व्यवस्था कर देता है, जहा पति की अनुपस्थिति मे प्रेमी ही आकर उसका सब-कुछ बनता है।

अचानक उसका पति अपने व्यवसाय के सिलसिले मे एक व्यवसायी मित्र के साथ वहा पहुचता है और उनके आयोजन मे विघ्न उपस्थित होता है, लेकिन भोला और भला पति वहा भी अपनी पत्नी के प्रति शकालु नही होता और उसके प्रेमी अपने मित्र के साथ मित्रता से ही पेश आकर चला जाता है। तब स्वय प्रेमी होटल के नौकर के हाथ उसके पास चिट्ठी भिजवाता है कि तुम्हरी पत्नी चरित्रवान नही है और यहा अमुक के साथ पत्नी-रूप मे रही है। इसका पति पर कुछ असर अवश्य होता है और वह अपनी पत्नी को चिट्ठी सुनाकर पूछता है कि क्या यह सच है? पत्नी भी इनकार नही करती, तो वह अपना सिर ठोक लेता है और कहता है—"अब तुम अपना रास्ता आप देखो।" वह यह भी सलाह देता है कि "अगर तुम चाहो, तो उससे ब्याह कर लो।"

लेकिन प्रथम तो पत्नी इस बात के लिए तैयार

नही होती, दूसरे इस बीच अनुग्रहकर्ता प्रेमी अपनी तरुणी प्रेमिका से विवाह कर लेता है और अपनी विवाहिता प्रेयसी से कहता है कि "तुम्हारे लिए मैं रुका कबतक रहता ?" आखिर वह पति से कहती है—"वह तो मेरा प्रेमी मात्र है, पति तो तुम ही हो, जिनसे मेरे बच्चे भी हैं—तुम्हे और बच्चो को छोडकर मैं नही जा सकती ।" और अत मे समाधान हो जाता है ।

ऐसी परिस्थितिया हमारे यहा भी न होती हो, ऐसा नही कह सकते । जिस तरह पुरुष सामाजिक प्राणी होने से अपनी पत्नी के सिवा अन्य स्त्रियो से भी मेलजोल रखता और उन्हे प्रेम करता है, स्त्रिया भी सामाजिक प्राणी होने से ऐसा न करती हो, यह नही कहा जा सकता । साथ पढनेवालो, बचपन मे खेलने-विचरनेवालो या दफ्तर आदि मे साथ-साथ काम करनेवालो में मेलजोल और प्रेम भी होता ही है । पुरुष को छिपाने की जरूरत नही होती, क्योंकि उसके मामले मे ऐसा क्षम्य है; लेकिन, स्त्री की समूची निष्ठा पुरुष (पति) मे सीमित कर देने, परपुरुष से मिलना-जुलना तक उसके लिए अवाछनीय मान लेने और कुछ प्रकृतिदत्त उसकी इस कमजोरी से कि पुरुष से किया गया सबध सतति के रूप में उसके सामने आता है, स्त्री को परपुरुष से अपना प्रेम गुप्त रखना पडता है। यह एक समस्या है, जिसकी उपेक्षा करके हम समाज के अदर गदगी ही नही बढने देगे, 'जारज' कही जानेवाली सतान से अपनी प्रतिष्ठा खोने के डर से गर्भस्राव और भ्रूण हत्याओ का पाप भी बढाते जायेंगे ।

'कप्लेसेंट' (अनुग्रहकर्ता) प्रेमी की स्वीकृति इस समस्या

का समाधान है, यह हम नही मानते; स्वय पश्चिम में भी इससे समस्या का समाधान हो गया हो, ऐसा नही लगा। मैंचेस्टर के टाउनहाल मे चुनाव-प्रक्रिया देखने की अनुमति के लिए जब हम बैठे प्रतीक्षा कर रहे थे, वहा रखे हुए एक पैफ-लेट ने हमारा ध्यान आकर्षित किया। वह ऐसे बच्चो के सबध मे था, जो स्त्री-पुरुषो के अवैध सबध से पैदा हुए थे या किन्ही अन्य कारणवश जिन्हे माताए अपने पास नही रख सकती थी। ऐसे बच्चो के लिए जिस ढग से अपील की गई थी, वह बहुत आकर्षक था, पर इस समय उसका जिक्र हमने यही बताने के लिए किया है कि 'कप्लेसेट लवर' को समाज हज्म कर ले, तो भी समस्या का समाधान नही होता और बच्चो की 'अवैधता' को मिटाने का कोई उपाय ढूढना ही होगा।

स्वीडन में, हमने सुना है, इसीलिए विवाह को अनिवार्य नही माना जाता और परिणय-सूत्र मे बधे बिना भी स्त्री-पुरुष साथ ही नही रह सकते, बल्कि उनके साहचर्य से बच्चा पैदा हो जाये, तो भी बुरा नही माना जाता। हम नही जानते कि यह कहांतक सच है, और सच है, तो समाज पर उसका कैसा असर पड़ रहा है, लेकिन जर्मनी मे एक स्वीडिश कुमारी से चल रही बातचीत मे उसने विवाहित जीवन के प्रति अपनी पसदगी जाहिर की। जब मैने बताया कि हमारे यहा विवाह के समय जो आशीर्वाद दिया जाता है, उसमे सौभाग्याकाक्षा के साथ-साथ स्त्री के पुत्रवती होने की कामना भी की जाती है और सतानोत्पादन के बाद ही विवाहित जीवन को सपूर्ण माना जाता है, तो उसे यह बात बहुत पसद आई और उसने कहा

कि यह बिलकुल ठीक है। नारी का जीवन ऊपर खुला दीखने पर भी, उसे स्वयं पति चुनने और जीविकोपार्जन की छूट होने पर भी, मुझे नही लगा कि पश्चिम की स्त्रिया हमारे देश की स्त्रियो से अधिक सुखी और संतुष्ट है। विवाहित जीवन भी, मुझे लगा, उतना स्थिर और सुदर शायद नही है जितना सुहावना ऊपर से दीखता है। पति द्वारा पत्नी का हर जगह आगे रखा जाना, उसकी इज्जत, उसके प्रति खुला प्रेम-प्रदर्शन—मुझे नही लगा कि उसका हमेशा आतरिक ही होना जरूरी है।

ब्रिटेन और पश्चिम के दूसरे राष्ट्र, जिनमे लोकतत्रीय शासन-प्रणाली है, जोर-जबरदस्ती से नही, वल्कि वुद्धि की युक्तियो द्वारा वश में किये हुए राष्ट्र हैं, इसलिए उनका समस्त जीवन-व्यापार सधा हुआ है। आजकल की भाषा मे इसे 'अनुशासन-युक्त' या 'अनुशासित' कह सकते है। एक स्थिति को लोग स्वीकार करते हैं, तो फिर अंत:प्रेरणा से उसके अनुसार चलते है। लोकतत्र मे दूसरे के काम मे दखल न देना, समाज या शासन की परपराओ के अनुसार चलना, अपनी समस्याओ के रोने रोते फिरने के वजाय उन्हे वरदाश्त करते हुए उन्हें हल करने के उपाय निकालना प्रत्येक का फर्ज है। हम यहा वस की लाइनो (क्यू) के लिए दडात्मक कानून वनाते हैं, इसी तरह लोगो के शिष्ट या अनुशासित व्यवहार के लिए नानाविध उपाय करते है, वहा वह एक अभ्यास वन गया है। आर्केस्ट्रा मे हम गये, तो दर्शको की भारी भीड मे हमने खडे हुए दर्शको की वहुसख्या देखी, पर क्या मजाल कि जो जहा खड़ा है, वहां से धक्का देकर आगे वढे—और उन दर्शको मे नौजवान ही नही, वृद्ध भी थे और स्त्रिया भी थी।

हर जगह ऐसे अनुशासित जीवन के हमे अनुभव हुए। उदाहरण के लिए, मैंचेस्टर मे जब हम थे, तो इस बार सूखे (वर्षा के अभाव) की वजह से लोगो से अपील की गई थी कि वे पानी का खर्च कम करे। भारतीय रेस्ट्रा के मालिक हमारे भारतीय मित्र ने हमे बताया कि इसीलिए कई दिन से उन्होने बाथ-टब मे स्नान नही किया और केवल मुह-हाथ धोकर रह गये। "पानी कम खर्च करने की अपील के बाद मैं इसके सिवा कर भी क्या सकता था ?"—यह उनका कहना था।

पानी उपलब्ध हो और फिर भी स्वेच्छा से ऐसा संयम करे, ऐसे उदाहरण हमारे यहा ढूढे ही मिलेगे, लेकिन वहां इसके अपवाद ढूढने पडेगे। यही अनुशासित या सधा हुआ जीवन है, जिसे देखकर हम इस परिणाम पर पहुचे कि पश्चिम मे लोगो का जीवन अपेक्षाकृत सुखी और सतुष्ट हो या न हो, पर वह पूरी तरह व्यवस्थित है। भिन्न सामाजिक परपराओ और भिन्न प्रकार के रहन-सहन के बावजूद यह नही कहा जा सकता कि वहां के लोग नैतिकता और मानवता मे हमसे नीचे दरजे के हैं।

: १२ :

यूरोप की झांकी

एक मास के बाद हमे स्वदेश के लिए प्रस्थान करना था, जिसके लिए औपचारिक विदाई प्रस्थान से कुछ दिन पूर्व ही हो गई। विदाई-समारोह निमत्रणकर्ता राष्ट्रमडल सपर्क विभाग की ओर से आयोजित किया गया, जिसमें राष्ट्रमंडल सपर्क मत्री लार्ड होम और उस विभाग के स्थायी सचिव श्री क्लटरबक के अलावा विभिन्न विभागो के जिम्मेदार अधिकारी, ब्रिटिश और भारतीय पत्रकार तथा ब्रिटिश चुनावो का अध्ययन करने के लिए वहा गये हुए भारतीय ससद के सदस्य श्री हरिश-चद्र हेडा सहित दो सौ से अधिक व्यक्ति सम्मिलित थे।

बी० बी० सी० भवन मे भी स्वागत-आयोजन हुआ और हमारे यात्रा-सस्मरण प्रश्नोत्तर के रूप में रेकार्ड किये गये। इसके बाद हम लोगो ने वापसी के कार्यक्रम बनाये। चार मे से दो ने सीधे भारत आने का निश्चय किया, जबकि श्री रामचद्रराव के साथ मैंने रास्ते में यूरोप के कुछ अन्य देशो की भी झाकी ले लेना ठीक समझा। रवाना होने से पहले लदन में रह रहे हिंदीभाषियो ने मेरे प्रति जो स्नेह-प्रदर्शन किया, उसकी सुखद स्मृति आज भी आनददायक है।

लदन से हम पेरिस गये, वहा से फ्रेंकफर्ट; उसके

बाद जूरिख और फिर वापस भारत आये। इस तरह लगभग एक सप्ताह में हमने फ्रास, जर्मनी और स्विट्जरलैंड का उडता अनुभव लिया। पेरिस की भव्यता और तरतीबवार बसाहट ने हमे आकृष्ट किया, फ्रैंकफर्ट को हमने ध्वस के बाद त्वरित गति से पुनर्निर्माण की जर्मनो की क्षमता का मूर्त रूप पाया, जबकि जूरिख की सुदरता और व्यवस्था ने हमे मोहित किया। दो बातो ने हमे तीनों जगह खासतौर से आकर्षित किया। एक तो यातायात में बाईं ओर के बजाय दाई ओर चलने का क्रम, दूसरे अंग्रेजी से काम चलने मे कठिनाई। अपने देश मे बाईं ओर चलने के अभ्यस्त मन को मोटरो आदि सवारियो का सडको पर दाई ओर चलना कुछ अजीब-सा लगा, इसी तरह पेरिस में सड़को व स्टेशनों के नाम और बातचीत फ्रेंच मे तथा फ्रैंकफर्ट व जूरिख में जर्मन मे पाकर लगा कि अपने देश मे जो हम अग्रेजी को ही सबकुछ समझते हैं, वह केवल भ्रम है। यह ठीक है कि हिंदी या दूसरी भारतीय भाषाएं वहा बिलकुल नही चलती, लेकिन अग्रेजी से भी काम बहुत मुश्किल से ही चलता है।

पेरिस की विलासिता की बात बहुत सुनी थी, कला के लिए भी उसकी प्रसिद्धि है। सीन नदी के किनारे घूमते हुए हमने कला-कृतियों की छोटी-बड़ी अनेक दूकानें देखी, रविवार का दिन होने से अनेक स्थानों पर कलाकारो को अपनी कलाकृतियो की अस्थायी दूकाने लगाये हुए भी देखा। पेरिस के हमारे मार्गदर्शक मित्र ने बताया कि जरूरतमंद कलाकार रविवार के दिन इस तरह दूकानें लगाकर अपनी कुछ चीजें बेच लेते हैं। नाइट क्लब या ऐसी किसी जगह हम नहीं गये,

पर शाम को जब हम अपने होटल से घूमने को निकल रहे थे, तो होटल की इचार्ज महिला ने (जो अधेड उम्र की थी) हमारे मार्गदर्शक मित्र को फ्रेच मे कुछ कहा। हमारे मित्र ने बताया कि वह चेतावनी दे रही है कि इन्हे कहा ले जा रहे हो, ये लोग कही फसकर बरबाद न हो जाये। स्पष्टीकरण करते हुए मार्गदर्शक मित्र ने बताया कि अकसर भारतीय यहा की रगीनियो के चक्कर में पड़कर ठगे जाते हैं और पछताते हैं। एक विशिष्ट व्यक्ति का यह किस्सा भी उन्होने सुनाया कि लदन मे किसी भारतीय व्यापारी से मोटर प्राप्त कर मोटर से सैर करते हुए वह पेरिस पहुचे और यहा एक लड़की के चक्कर मे पड गये। एक दिन वह लडकी मोटर और उनके पास का रुपया लेकर चपत हो गई। फलत उन्हे भारतीयो से कुछ माग-मूगकर यहा से जाना पड़ा। इसमे सबसे मजेदार बात लडकी से ठगे जाने पर भी उनके ये उद्गार लगे कि "मोटर या रुपये का उतना अफसोस नही, पर लडकी का जरूर अफसोस है, जिससे कि मैं सचमुच प्यार करने लगा था!"

पेरिस सचमुच विलास का केद्र है, या स्त्री-पुरुषो की मुक्तता सचमुच चरित्रहीनता पर आ गई है, ऐसा हम नही कह सकते। इसी तरह फ्रैकफर्ट मे जर्मन सूचना विभाग की महिला अधिकारियो के साथ रात को देर तक रहने और थिएटर व 'पब'[1] मे जाने पर भी ऐसा कोई अनुभव नही हुआ।

---

[1] वह सार्वजनिक स्थान जहा लोग अपने रजोगम भूलने के लिए जाते हैं और शराब, वाद्य या हसी-मजाक से ताजगी प्राप्त करते हैं।

इसके विरुद्ध स्त्रियो की आत्मनिर्भरता और क्रियाशीलता की अच्छी छाप पडी। जो स्त्रिया जीविकोपार्जन के लिए अपने निवासस्थान से ५०-५० मील दूर तक जाये, काम पडने पर देर रात तक विदेशी अतिथियों के साथ रहे और फिर भी यह न महसूस होने दे कि उकता रही है, न उच्छृंखलता या वासना की शिकार हो, उनके लिए दूषित विचारों के बजाय आदरपूर्ण स्नेह ही पैदा हो सकता है। फ्रैंकफर्ट के एक पब मे, जो विशेषत लेखको व पत्रकारों के लिए था, वहां की लेंडलेडी को जब मालूम हुआ कि हम भारत से आये है, तो उसने बताया कि एक भारतीय कलाकार वहा अकसर आते हैं। उनके बनाये कला-चित्र ही वहा लगे हुए उसने हमें नही दिखाये, बल्कि दर्शक-सम्मति भी लाकर बताई, जिसमे मराठी मे उनका लिखा हुआ यह नोट था कि "मैं काफी समय बाद यहा आया, तो मुझे वही पहले जैसा प्रेम और सद्भाव मिला।" विदेश मे एक भारतीय भाषा मे लिखा ऐसा नोट पढकर हमे आनदानुभव होना स्वाभाविक था। उससे प्राप्त प्रेरणा का ही परिणाम था कि लेंडलेडी के आग्रह पर मैंने भी हिंदी मे ही जर्मन जनता के प्रति अपनी श्रद्धाजलि उस पुस्तिका मे लिखी। तात्कालिक व्यवहार और प्रभाव अगर ठीक कसौटी हो, तो निस्सदेह जर्मन लोगो के बीच अपनापन अधिक है, और, पुनर्निर्माण की उनकी क्षमता तो लड़ाई में विध्वस्त हुए फ्रैंकफर्ट मे जहा-तहा स्पष्ट थी।

ज़ूरिख मे जहा सुदरता बिखरी हुई है, वहा सफाई भी और जगह से ज्यादा मिली। सुव्यवस्था के दो प्रमाण हमे स्वय मिले।

हमे एक भारतीय मित्र का पता लगाना था, जो वहा इजीनियरिग की टेकनिकल ट्रेनिंग को आये हुए थे। इटरनेशनल प्रेस इस्टीट्यूटवालो से फोन कराकर यह पता तो लगा लिया कि वह अमुक टेकनिकल इस्टीट्यूट मे है, लेकिन उस वक्त वह वहा थे नही और घर का पता नही लग रहा था। आखिर फारेन पुलिस से पूछा गया। वहा से बताया गया कि उन्हे यहा आये हुए दो सप्ताह से कम हुआ है, इसलिए अभी हमारे यहा पता नही है, टाउनहाल जाकर पता लगाये। टाउनहाल हम ऐसे वक्त पहुचे, जब दफ्तर बंद होनेवाला था, जर्मन हम जानते नही थे, फिर भी रिसपशनिस्ट के बताने पर झिझकते हुए एक कमरे मे गये। वहा तत्काल हमारी बात सुनी गई और एक से दूसरे व्यक्ति के पास टाइप किये सदेश जाते हुए पाच मिनट के अदर हमे टाइप किया कार्ड मिला कि अभी यह नाम दर्ज नही हुआ है, अगली बार आप इस कार्ड को लेकर आये, तो पूछताछ का चार्ज नही किया जायेगा। कुछ सेंट इस काम के लिए देने पडे, पर काम निपटाने की शीघ्रता और व्यवस्था ने प्रभावित किया।

इसी तरह वहा की राजधानी बर्न से एक सूटकेस आया था, जिसे हमे अपने साथ भारत लाना था। फोन पर उसका वजन सुनकर पहले हम इनकार कर चुके थे, लेकिन चलने के दिन अपना सामान व्यवस्थित कर हमने हिसाब लगाया, तो देखा कि उसे ले जा सकते थे, अत. होटलवाले से उसे भिजवाने के लिए फोन कराया। दोपहर की यह बात थी और होटलवाले ने कहा कि रात के ८ बजे वह आयेगा।

ठीक ८ बजे जब डाकवाला उसे वहां दे गया और हमें पता लगा कि यह एक्सप्रेस ट्रेन से डाक द्वारा आया है, तो हमें आश्चर्य हुए बिना न रहा।

इस तरह यूरोप के देशो के अनुभव लेते हुए हम अपने देश वापस आये। स्वदेश मे स्वजनो और स्नेहियो का पुनर्मिलन जहां हर्षदायक था, वहा छः सप्ताह की यह विदेश-यात्रा एक कहानीमात्र रह गई। वहा मिले व्यक्ति और देखे दृश्य समय-समय स्मृतिपटल पर आते रहते हैं और आते रहेंगे, लेकिन उनमें से कितनों से फिर मिलना होगा और कितने दृश्य फिर से देखे जा सकेंगे, यह नही कहा जा सकता।

मंडल का संस्मरण और यात्रा साहित्य

संस्मरण

ग्रमिट रेखाएं	सपादिका सत्यवती मल्लिक	३.५०
एक आदर्श महिला	विनायक तिवारी	१ ००
क्रातिकारी के संस्मरण	बनारसीदास चतुर्वेदी	१ ००
काश्मीर पर हमला	कृष्णा मेहता	२.००
मानवता के झरने	गणेश वासुदेव मावलकर	१ ५०
मेरी जीवन-यात्रा	जानकीदेवी बजाज	२ ००
मेरे सस्मरण	गणेश वासुदेव मावलकर	२.५०
मील के पत्थर	रामवृक्ष बेनीपुरी	२.००
मै भूल नहीं सकता	कैलासनाथ काटजू	२ ५०
मैं इनका ऋणी हूं	इद्र विद्यावाचस्पति	२.२५
लोकमान्य तिलक	पाडुरग गणेश देशपाडे	२ ५०
विनोबा के साथ सात दिन	श्रीमन्नारायण	० ७५
स्मरणाजलि (अजिल्द)	सपादक काका कालेलकर	१ ५०
,, (सजिल्द)	,, ,,	२ ५०
कोई शिकायत नहीं	कृष्णा हठीसिंग	२ ५०

यात्रा

लद्दाख-यात्रा की डायरी	कर्नल सज्जनसिंह	२ ५०
हिमालय की गोद मे	महावीरप्रसाद पोद्दार	२.००
दुनिया की सैर अस्सी दिन मे	डा० परमेश्वरीदीन शुक्ल	१ २५
जापान की सैर	रामकृष्ण बजाज	१ ५०
जय अमरनाथ	यशपाल जैन	१ ५०
उत्तराखड के पथ पर	,,	२ ००
रूस मे छियालीस दिन	,,	३ ००
प्राकृतिक चिकित्सक की यूरोप यात्रा	वि० दा० मोदी	१.५०

सत्साहित्य-अल्पमोली संस्करण

—सस्ता साहित्य मडल की इस माला मे चुनी हुई लोकोपयोगी पुस्तके सस्ते मूल्य मे दी जा रही है। इस माला के प्रकाशन के पीछे हमारा ध्येय यह है कि सत्साहित्य का व्यापक रूप मे प्रचार और प्रसार हो। पुस्तको के चुनाव मे विविधता का विशेष ध्यान रखा जा रहा है। उच्च कोटि की इतनी सामग्री इतने सस्ते मूल्य मे अन्यत्र शायद ही मिल सके।

पहला सेट

१ दशरथनदन श्रीराम २ ५०
२ इग्लैंड मे गाधीजी (महादेव देसाई) १ २५
३ गाधी की कहानी (लुई फिशर) १.५०
४ कोई शिकायत नही (कृष्णा हठीसिंग) १ ५०
५ आसू और मुस्कान (ख़लील जिब्रान) १ ००
६ अमृत की बूदे (आनदकुमार) १ ००
७ अठारहसौ सत्तावन (बालाजी श्रीनिवास हर्डीकर) १ २५

दूसरा सेट

१ इतिहास के महापुरुष (जवाहरलाल नेहरू) १ ५०
२ सर्वोदय-सदेश (विनोबा) १ ५०
३. बापू की कारावास-कहानी (डा० सुशीला नैयर) २ ५०
४ तूफान और ज्योति (सुमति धनवटे) १ ५०
५ रूस मे छियालीस दिन (यशपाल जैन) १ ५०
६ प्राकृतिक जीवन की ओर (एडोल्फ जस्ट) १ ५०

तीसरा सेट (प्रेस मे)

१ खडित पूजा (विष्णु प्रभाकर)
२ भारत-विभाजन की कहानी (ए० के० जान्सन)
३ यूरोप की यात्रा (विट्ठलदास मोदी)
४ सूफी-सत-चरित्र (भगवान)
५ बापू-वचन (माईदयाल जैन)
६ सिपाही की बीवी (मामा वरेरकर)
७ अतलातक के उस पार (रामकृष्ण बजाज)

चौथा सेट (तैयार हो रहा है)

१ अनोखा (विक्टर ह्यूगो)
२ जीवित रेखाए (कृष्णा हठीसिग)
३ धरती का देवता (खलील जिब्रान)
४ सूक्ति रत्नावली
५ रिबेका (दाफ़्ने दु मोरिए) ..